यशवंतरावजी चव्हाण

व्यक्ति और कार्य

लेखक
श्री. रंजन परमार

9423122676
9823266904

एकमेव विक्रेते
श्री लेखन वाचन भंडार
लक्ष्मी रोड, पूना २

मूल्य डेढ़ रूपया

154

यशवंतरावजी चव्हाण

व्यक्ति और कार्य

298

लेखक

श्री. रंजन परमार

298

Y. B. CHAVAN LIBRARY
- MUMBAI -
CALL NO. H
ACC. NO.: 254
DATE: 18/2/2013
CHA/PAR

50

एकमेव विक्रेते
श्री लेखन वाचन भंडार
लक्ष्मी रोड, पूना २

Copy 2

मूल्य डेढ़ रूपया

स्वर्गीय जन्मदात्री
सुश्री सणगारदेवी
एवं
सुश्री विजयादेवी
को—

—रंजन परमार

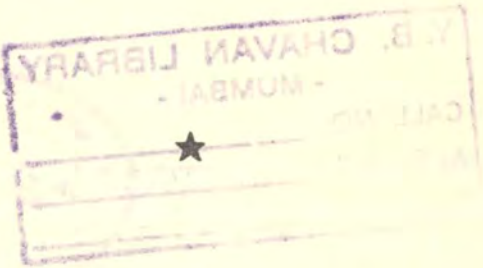

प्रथम आवृत्ति : २७ अप्रैल १९६०

प्रकाशक :
श्री. ग. ल. ठोकळ, बी. ए., बी. टी.
ठोकळ प्रकाशन
६२ बुधवार, पूना २

मुद्रक :
वि. पु. भागवत
मौज प्रिंटिंग ब्यूरो
खटाववाडी, बम्बई ४

आत्मकथन

राज्यपुनर्गठन आयोग का प्रतिवेदन प्रकाशित होते ही भारत के अन्य राज्योंमें जहाँ राहत और उत्साह का वातावरण पैदा हुआ वहाँ बम्बई राज्य में एक सिरे से दूसरे सिरे तक असंतोष, अशांति और रोष की लहर फैल गई। वातावरण में उग्रता आगयी। आपसी तनाव कम होने के बजाय बढ गया और भाषाई-आन्दोलन का भस्मासुर बेकाबू हो, प्रदेशमें सर्वत्र धूम मचाने लगा। इस परिस्थिति पर काबू पाने के लिए तथा गुजराती-मराठी भाषी प्रजामें आत्मविश्वास की भावना निर्माण करने हेतु भारतीय लोकतांत्रिक सर्वोच्च सत्ता लोकसभाने विशाल द्विभाषिक का पर्याय सुझाया।

सर्व दृष्टि से यह सुझाव उपयुक्त और योग्य था। इस के जरिये सभी के प्रति समुचित न्याय की वृत्ति अपनायी गई थी। गुजराती और मराठी बान्धवों को हाथ में हाथ मिला कर नव भारत में प्रगतिशील एवं आदर्श राज्य की प्रजा-जन बनने का पूरा अवसर दिया गया था। लेकिन निहित स्वार्थी गुट न माने। ऐसे अवसर पर श्री मोरारजी देसाई के केन्द्र में चले जाने से विशाल द्विभाषिक की नौका को कार्य-कुशलता, सौजन्य वृत्ति एवं सौहार्दपूर्ण वातावरणमें किनारे लगाने का महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व जिन नौजवान और शक्तिशाली कंधों पर पडा वह हैं बम्बई राज्य की प्रजाके आँख के तारे जन नेता श्री यशवंतराव चव्हाण!

श्री यशवंतराव चव्हाण ने जिस खूबी से, आत्मविश्वाससे और अद्‌भुत मेधासे राज्य की धूरा वहन कर अपने पूर्वगामी मुख्यमंत्रियों की परंपरा को अन्त तक बनाये रखा—यह उनकी अद्वितीय राजनीतिज्ञता एवं प्रशासन-पटुता का आदर्श उदाहरण है। विरोधियोंने उन्हें संयुक्त महाराष्ट्रका हत्यारा कहा—उसी संयुक्त महाराष्ट्र को साकाररूप देकर जनता की वर्षों पुरानी महेच्छाओं को सामंजस्य वृत्ति और पारस्परिक स्नेहपूर्ण वातावरण में पूर्ण करनेवाले जनसेवक एवं अद्‌भुत प्रतिभासंपन्न युवक मुख्य मंत्री का परिचय बम्बई राज्य के बाहर असंख्य हिन्दी भाषा-भाषी जनता को हो, इसी उद्देश्यवश मैंने यह जीवनचरित्र लिखा है।

इसे प्रकाशन करने की पूरी जिम्मेदारी उठानेवाले श्री ग. ल. ठोकल, मराठी के मूर्धन्य साहित्यकार और प्रकाशक हैं। उनके मेरे प्रति रहे स्नेह एवं प्रेमके

प्रतीक स्वरूप ही यह चरित्र आज प्रकाशित हो रहा है। ठीक वैसे ही चरित्र लेखन समय श्री दयार्णव कोपर्डेकर, श्री दीपक परमार, श्री श्री. द. बोकिल, श्री. गौरिहर सिंहासने, आदि की उपयुक्त सूचनाएँ, श्री ह. रा. महाजनी के लेख, श्री बाबूराव काले कृत मराठी जीवनचरित्र 'विचारधारा' तथा 'नवभारत टाइम्स' के कतरन आदि का भरपूर उपयोग किया गया है अतः सम्बंधित लोगों का अत्यंत आभारी हूँ।

साथ ही श्री मु. मा. जगताप, रविवार पेठ काँग्रेस के अध्यक्ष श्री नारायण महागांवकर, श्री अरविंद मेहता, श्री रमेश चि. शाह एवं सुश्री शैलजा का कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने आवश्यक सहयोग प्रदान कर प्रस्तुत चरित्र पूर्ण कराने में सक्रिय योग प्रदान किया है।

३११ रविवार पेठ, पूना २
रंगपंचमी, २०१६

रंजन परमार

१ : परिचय

"इस राज्य को आज तक दो मुख्य मंत्री प्राप्त हुए। उन्होंने सर्वसाधारण परिस्थिति में राज्य की धुरा वहन कर इस राज्य को देश का सर्व-प्रगत आदर्श राज्य बनाने की भरसक कोशिश की। लेकिन उन्हें अपने कार्य-काल में जितनी मुसीबतों, क्लेषों, विषमताओं एवं पग पग पर आ पडती आपत्तियों का सामना करना पडा उससे कई गुना ज्यादा राज्य के वर्तमान मुख्य मंत्री को करना पड रहा है। ठीक वैसे ही यह भी निर्विकार सत्य है कि जो यश, कीर्ति और सफलता पूर्वगामी दो मुख्य मंत्रियों को हासिल न हुई उससे कई गुनी अधिक सफलता, यश और कीर्ति वर्तमान मुख्य मंत्री को राज्य के विस्फोटक और अस्थिर वातावरण में मुख्य मंत्रीत्व का महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व अंगिकार करने के सिर्फ एक वर्ष की अल्पावधि में ही प्राप्त हुई। जादू की छडी तरह उन्होंने सारी अशांत परिस्थिति पर अपना नियंत्रण प्रस्थापित कर शांतिमय तरीके से जनतंत्र की नींव पक्की की। एक समय मैं भी गृहमंत्री था। अतः शांति प्रस्थापना का कार्य कितना दुष्कर और मुश्किल है इससे मैं पूर्णतया परिचित हूँ। बंदूक की गोलियाँ, अश्रुगैस का मारा और छडीमार के बिना जहाँ हम शांति प्रस्थापना में कभी सफल न हो सके वहाँ आजके हमारे मुख्य मंत्री ने अपने मृदु स्वभाव, अल्पभाषी वृत्ति और स्नेहपूर्ण व्यवहार से विरोधी दलों की जडें खोखली कर जनतंत्र का पाया सुदृढ बनाया है। कुछ लोग कहते हैं कि काँग्रेस में युवा-शक्ति का पूर्णतया अभाव है। नये खून के लिए कोई स्थान नहीं। काँग्रेस के पास तरुण नेतृत्व नहीं है बल्कि यह बुजुर्गों की संस्था बन गई है। लेकिन वे गलत कहते हैं और गलत सोचते हैं। काँग्रेस में रहे नये खून और युवा शक्ति के प्रतीक तथा पुरोगामी विचारधारा का प्रत्यक्ष उदाहरण हमारे वर्तमान मुख्य मंत्री खुद ही हैं। काँग्रेस के इतिहास में एक युग फिरोजशाह मेहता का था, उसके बाद बैनर्जी का युग आया, तत्पश्चात् लोकमान्य तिलक अर्से तक राष्ट्रीय सभा पर छाये रहे। लोकमान्य की मृत्योपरांत महात्मा

गांधी कॉंग्रेस के कर्णधार बने। आज पंडित नेहरू की कॉंग्रेस है, और आनेवाली कॉंग्रेस नौजवानों की होगी, नये खून की होगी, देश की युवा-शक्ति की होगी, अर्थात् वर्तमान मुख्य मंत्री की होगी।" उपरोक्त उद्‌गार उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व राज्यपाल, भारतीय संविधान के निर्माता, देशके श्रेष्ठ राजनीतिज्ञ, मूर्धन्य साहित्यकार एवं स्वतंत्र पार्टी के प्रमुख नेता श्री क. मा. मुंशी के हैं, जो उन्होंने बम्बई नगर के समस्त श्रमिक-मंडलों द्वारा आयोजित मुख्य मंत्री श्री यशवंतराव चव्हाण का सार्वजनिक अभिनन्दन करने के लिए आयोजित समारोह की अध्यक्षता करते हुए व्यक्त किये थे।

एक प्रसंग पर कॉंग्रेस के तत्कालीन अध्यक्ष श्री उछरंगराय ढेबरने यशवंतराव का गौरवानुवाद करते हुए कहा था कि नूतन बम्बई राज्य की नौका किस तरह चलेगी इसकी चिंता हमें रातदिन खाये जा रही थी। भाषाई प्रश्न को लेकर समिति और परिषदने ताण्डव मचा कर जिस विस्फोटक स्थिति को पैदा किया था। उस पर काबू पाना निहायत जरूरी था। और हमारी वह चिंता राज्य के मुख्य मंत्री श्री यशवंतरावने अपनी अद्वितीय प्रशासनपटुता, बेजोड नेतृत्व एवं व्यावहारिक बुद्धि से दूर की। कॉंग्रेस को श्री यशवंतराव चव्हाण जैसे युवक-नेता प्राप्त होने पर नाज है। ये विचार ही यशवंतराव की कर्त्तव्य-परायणता एवं कार्यकुशलता के ज्वलंत प्रमाण हैं। पंडित नेहरू, गोविंद वल्लभ पंत, श्री मोरारजी देसाई, श्री कृष्ण मेनन आदि देशके वरिष्ठ नेता श्री यशवंतराव की कर्तृत्वशक्ति, संगठन चातुर्य और विवेकी वाणी की ओर बडे ही कौतूहल से देख रहे हैं। यशवंतराव की कीर्ति और यश में तब चार चाँद लग गये जब देश की सर्वमान्य शिक्षणसंस्था अलीगढ विद्यापीठने उन्हें 'डॉक्टर ऑफ लॉज्' का खिताब अर्पण कर सम्मानित किया। राजकीय क्षेत्रमें कार्य करने वाले असंख्य कार्यकर्ताओंमें से किसी नौजवान कार्यकर्ता का इस कदर किसी विश्वविद्यालय ने सम्मान किया हो, यह पहला ही अवसर है।

Ref :- यशवंतरावजी चव्हाण व्यक्ती और कार्य,
लेखक :- श्री रंजन परमार, पान नं १-२

२ : चव्हाण-परिवार

भारत भूमिमें मराठा प्रदेशके नामसे प्रसिद्ध महाराष्ट्र प्रदेश वीरोंकी भूमि और दक्षिण-भारतका मुकुट-मणि है। इसका नाम लेते ही बरबस हमारा ध्यान सदियों पुराने भारतके इतिहासकी ओर खींच जाता है, जहाँ छत्रपति शिवाजी जैसे नरशार्दूलने जन्म धारण कर हिन्दुपदपादशाहीकी बुझती हुई लौ को अपना जीवन-सर्वस्व अर्पण कर तथा मुगल साम्राज्यके पुष्ट होनेवाले महादानवसे त्रस्त मानवतामें संजीवनी-शक्ति फूँककर प्रज्वलित रखा था; जहाँ के कण-कणमें व्याप्त 'ज्ञानोबा-तुकाराम' के भक्ति गीतोंकी सूरावलि आज भी मनुष्य-मात्रको आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करनेका संदेश देती है, जहाँ की हवा श्रीसमर्थ रामदास स्वामीके 'कम्मे शूरा सो धम्मे शूरा' के अगम मंत्रको जन-मानसमें बिखेरती देश-रक्षा, मानव-सेवा और धर्म-परायणताका त्रिवेणी घोष गूंजाती आज भी मन्थर गतिसे बह रही है।

इसी मर्द-मराठा प्रदेशके सातारा जिलान्तर्गत खानापुर तहसीलका विटा गाँव चव्हाण-परिवारका मूल स्थान। विटा, खानापुर तहसीलकी मुख्य मंडी और कस्बा। फिर भी अमुक सरकारी कर्मचारियोंको छोड दें, तो सारी बस्ती मध्यम वर्गीय समाजकी। लगभग आधी सदीके पहले चव्हाण-परिवारके तत्कालीन मुखिया बलवंतराव इस गाँवमें रहते थे। बलवंतरावकी विटामें थोडी-बहुत अपनी खेती-बाडी थी, जिसे वे खुद ही खेते थे। दूसरे किसानोंकी साझीदारीमें खेती और दूसरा धंधा रोज़गार कर भारतके सात लाख गाँवोंमें बिखरे हुए करोडों किसानोंकी तरह अपनी घर-गृहस्थी चलाते थे। खेतीके लिए आवश्यक बैल, गाय, भैंस आदि सभी कुछ उनके पास मौजुद थे, जिसके जरिये बलवंतरावका घर-संसार ठीक ठीक चलता था। फलतः खेती-बाडीके साथ ही बलवंतराव दूध बेचनेका भी धंधा करते थे। इस धंधेसे उन्हें कोई खास आमदनी तो होती न थी, लेकिन परिवारकी छोटी-मोटी जरूरतें अवश्य पूरी हो जाती थीं।

लेकिन बलवंतरावका लक्ष्य कुछ और ही था। वे खेती-बाडी तथा दूध बेचनेका धंधा करते हुए पेट काटकर जिंदगी बसर करने के बजाय स्थायी नौकरी की तलाशमें थे। कहते हैं भगवान के घर देर है, अंधेर नहीं। इन्हीं दिनों वे किसी सब्जजके यहाँ दूध देनेका काम करते थे। प्राथमिक परिचयके बाद एक बार बलवंतरावने सब्जज साहबसे अपनी नौकरीके लिए प्रार्थना की।

सबजज साहब दयालु सज्जन थे। उनके मनमें बलवंतरावकी गरीबीके प्रति सहानुभूति पैदा हुई। लेकिन सवाल यह था कि इस अनपढ और गँवार किसानको सरकारी नौकरी दिलवा दी जाए तो कौन सी? फिर भी उन्होंने अपनी कोर्ट में बलवंतरावको बेलिफके पद पर नियुक्त करवा ही दिया।

तीन चार वर्ष तक विटा कोर्टमें बेलिफके पद पर काम करनेके पश्चात् बलवंतरावका तबादला कराड कोर्टमें हुआ। चव्हाण-परिवारको विटासे कराड आना पडा। उस समय बलवंतरावके ज्ञानोबा, गणपत, यशवंत तथा राधा ऐसी कुल चार संतानें थीं, जिसमें यशवंतराव बिलकुल नन्हे लगभग एक डेढ साल के थे। उनका जन्म सन् १९१४ के मार्च महीनेकी १२ तारीखको विठाबाईकी कोखसे 'देवराष्ट्र' गाँवमें हुआ था। 'देवराष्ट्र' यशवंतरावके ननिहालका गाँव! इस तरह बलवंतराव चव्हाणका पाँच-छः जनोंका छोटासा संसार विटासे कराड आकर अभी ठीकसे बस भी न पाया था कि सहसा सन् १९१७-१९ में प्लेगकी महामारी जिलेके एक छोर से दूसरे छोर तक दावानलकी तरह फैल गई। सर्वत्र हाहाकार मच गया। इस आपत्ति से चव्हाण-परिवार भी अछूता न रहा। देखते ही देखते बलवंतरावको इसने ग्रस लिया। बलवंतरावकी अकाल मृत्युसे चव्हाण-परिवार पर मुसीबत और दुःखोंका पहाड टूट पडा। परिवारका आधारस्तंभ ही चला गया। बेचारी अबला नारी और उसके चार नन्हे-मुन्ने दर दर भटकने लगे। गरीबी, घर-गिरस्ती, बच्चोंका लालन-पालन और उदर-निर्वाह विधवा विठाबाईके सामने जटिल समस्या खड़ी हो गई। लेकिन वह नारी हिम्मत न हारी। उसने मुसीबत और विपत्तियोंसे टक्कर लेनेकी ठानी।

उस समय बडे पुत्र ज्ञानोबाकी आयु कोई चौदह सालकी, गणपतरावकी दस और यशवंतरावकी सिर्फ पाँच वर्ष की थी। कराडमें बलवंतराव जिन सबजज साहबके मातहत काम करते थे वे बडे सज्जन और दयालु वृत्तिके थे। उनसे चव्हाण-परिवारका दुःख देखा न गया। परिणाम स्वरूप उसे कुछ न कुछ मदद दिलानेका मन ही मन दृढ निश्चयकर उन्होंने सारा वृत्तान्त गोरे न्यायाधीशके कानों पर डालनेका निर्णय किया। तदनुसार उन्होंने मौका देखकर बडी खूबीसे यह बात न्यायाधीश महोदयके समक्ष निवेदित की और वह भी ऐसे प्रभावशाली ढंगसे कि गोरे न्यायपति भी दयार्द्र हो उठे। उनका मन पसीज गया। उन्होंने चव्हाण-परिवारको दिलासा दिया और योग्य सहायता देनेका आश्वासन भी। परिणामतः आठ ही दिनमें कराड कोर्टमें चौदह वर्षीय किशोर

ज्ञानोबाकी 'वेलिफ' के पद पर नियुक्ति हो गई। मूसलाधार बारिशके बाद जब सूर्यनारायणकी प्रथम किरण धरतीके पंखों पर सवार हो किलकने लगती है तब जो खुशी सृष्टिके लोगोंको होती हैं वह खुशी—वही प्रसन्नता ज्ञानोबाकी नौकरी लग जानेसे निराधार चव्हाण-परिवारको हुई। विशेषतः विठाबाईके आनन्दका पारावार न रहा। फिर भी चार भाई-बहन और विधवा माँके जीवन-निर्वाहकी समस्या इतनी सरल न थी जो आसानीसे हल हो जाए। 'विटा' में चव्हाण-परिवारकी खेती-बाडी थी और बलवंतराव दूसरे किसानोंकी साझीदारीमें भी थोडा-बहुत कमा लेते थे। साथ ही विटासे कराड तबादला हो जाने पर भी समय पर अपना हिस्सा बिना किसी रोक-टोक ले आते थे। अतः घर-गिरस्तीका गाड़ा येन केन प्रकारेण चलता रहता था। लेकिन कराडमें यह बात न थी। विटा एक मामूली कस्बा तहसीलका थाना था जब कि कराड शहर था। यहाँ मँहगाईका बोलबाला था। जीवन-मानका स्तर ऊँचा था। फिर भी वे गुजारे जितना अवश्य प्राप्त कर लेते थे। लेकिन बलवंतरावकी मृत्युके पश्चात् चव्हाण-परिवारको भला कौन दाद दे? सभीने आँख आडे कान कर दिये। और ज्ञानोबा ठहरे मामूली नौकर। इतनी कम तनख्वाहमें पाँच सदस्यीय परिवारका भरण-पोषण कराड जैसे शहरमें होना बिलकुल असंभव था। विठाबाईको यह चिंता रात-दिन खाये जा रही थी, फिर भी उस अबला नारीने धीरज न छोडी और हिम्मतसे काम लिया। उन्होंने ज्ञानोबा और गणपत तथा राधाबाईको अपने पास कराडमें रखकर नन्हे यशवंतरावको ननिहाल भेज दिया।

बलवंतरावकी अकाल मृत्युके बाद सारे परिवारकी जिम्मेदारी विधवा माँ विठाबाई और किशोर ज्ञानोबाके उपर अनायास आ पडी। उन्होंने अपने अल्प वेतनमें भी भाई-बहनोंके लालन-पालन तथा विधवा माँकी सेवा-शुश्रूषामें कोई कसर उठा न रखी। और अपना सारा जीवन भाई-बहनके संवर्धनमें लगा दिया। उन्होंने गणपतराव, यशवंतराव और राधाबाई पर ममताके पंख फैला दिये। इनके सुखको अपना सुख और इनके दुःखको अपना दुःख माना। बचपनसे ही किसान होनेके कारण वे कडी मेहनत करते समय अघाते न थे। उनका मन गंगा-सा निर्मल और हृदय हिमालय-सा विराट विशाल था। ज्येष्ठ भ्राताके उदार हृदय, मृदु स्वभाव और स्नेहने गणपतराव, यशवंतराव और राधाबाईको स्वर्गस्थ पिताकी भूलकर भी याद आने न दी।

कराडमें आने पर भी चव्हाण-परिवारके रहन-सहनमें कोई खास परिवर्तन नहीं हुआ। बल्कि विटाकी तरह सामान्य स्थिति ही बनी रही और आज जब कि

परिवारका एक सदस्य राजनीतिक क्षितिज पर सोलह कलाओंसे विभूषित हो अपनी प्रखर ज्योतिसे सर्वत्र प्रकाश फैला रहा है तब भी ज्ञानदेव उनका परिवार और विधवा माँ विठाबाई सामान्य स्थितिके किसानोंके बीच रहकर सारा जीवन बिता रहे हैं। ज्ञानोबाकी पारिवारिक-संस्कृति कृषक-समाजकी होनेके कारण कराड जैसे आधुनिक शहर और सुधरे हुए वातावरणमें आ बसने पर भी उनमें कोई परिवर्तन नहीं आया।

यशवंतरावके मंझले भाई गणपतरावका शिक्षण, ज्ञानोबाने अत्यंत कष्ट और आपत्तियोंके बीच मेट्रिक तक कराया। वे कर्तव्य-परायण महत्वाकांक्षी गृहस्थ थे। उन्होंने अपनी अधूरी पढाईका प्रायश्चित छोटे भाईको सर्वोच्च शिक्षण दिलाकर करनेका दृढ निश्चय किया। गणपतरावका काल, बीसवीं सदीकी संस्कृतिकी ओर वेगसे कदम बढाते जन-मानसका संक्रमण-काल है। उन्होंने भावी जीवनको खेती-बाडीपर निर्भर रखना मूर्खता समझकर शिक्षण को जीवन-साधन माना। भारतका ग्रामीण समाज आज भी अनपढ है, नाना प्रकारकी बुराइयोंसे ग्रस्त है, और कुरीति तथा दकियानूसी ख्यालोंके पाटमें पिस रहा है। उसे अगर ऊपर लाना है, सेठ-साहूकार और स्वार्थी पढे-लिखोंके चंगुलसे अगर उसे मुक्त करना है तो बहुजन समाजको मृतावस्थासे जगाना होगा, जनता-जनार्दनमें संजीवनी शक्तिका संचार करा, उसे अपने अधिकारोंके प्रति सजग और सचेष्ट करना होगा। तभी मानवताका मंत्र फूका जाएगा। मानव मानवसे प्रेम करने लगेगा। 'बिना सहकार नहीं उधार'वाली सूक्तिका जयघोष होगा। और यह सब तभी हो सकता है जब शोषकोंकी पकडमें कराहते बहुजन समाजको जाग्रत किया जाए।

इसी सिद्धांतको लेकर महात्मा फुलेने 'सत्यशोधक समाज'की नींव डाली थी, जिसकी आवाज महाराष्ट्रके कोने कोनेसे निनादित हो रही थी। लोग अपने अधिकार और कर्तव्यके प्रति आकर्षित हो रहे थे। सुप्तावस्था मिटकर सर्वत्र जागृति आ रही थी। गणपतराव भी इस आन्दोलनसे अलग न रह सके। महाराष्ट्रमें जेधे बंधु, जवलकर आदि मराठा कार्यकर्ता हाथमें हाथ मिलाकर इस आन्दोलनको दृढ करनेमें लगे हुए थे। उनकी निगरानीमें गणपतराव भी विद्यार्थी दशासे ही सक्रिय भाग लेने लगे। आगे चलकर गणपतरावके क्रांतिकारी-जीवनके छींटें यशवंतरावके जीवन पर भी उडते गये और सामाजिक क्रांतिकी विचार-धारा राष्ट्रपिता महात्मा गांधीके स्वाधीनता आंदोलनसे समरस होकर शुद्ध राष्ट्रीय स्वरूप प्राप्तकर बहने लगी, जिस पर यशवंतरावकी जीवन नौका मन्थर गतिसे सही रास्ते पर बढ चली।

यशवंतरावकी पारिवारिक-संस्कृति अशिक्षित होने पर भी पारिवारिक-परिधिसे बाहर उनका जीवन-पुष्प उच्च संस्कृतिके वातावरणमें पलकर पूर्ण विकासकी ओर बढ रहा था। ठीक वैसे ही भारत-भू पर घटनेवाली दैनंदिन घटनाओंका प्रतिबिंब भी समय-समय पर कराडके सामाजिक-जीवन पर उमटता रहता था जिसका परिणाम भी यशवंतराव पर होता रहता था। फलतः कृष्णाके जल और कराडकी धरतीका यशवंतरावकी सफलता, प्रतिभा, वक्तृत्व-शक्ति और कर्तव्य-परायणतामें खास हाथ है—यह कहना अतिशयोक्ति न होगी।

Ref: यशवंतरावजी -व्यक्ति व्यक्ती आणि कार्य,
लेखक: श्री रंजन परमार, पान नं ३ ते ७.

३ : प्रारंभिक-शिक्षण

यशवंतरावके पुरखोंका मूल गाँव सातारा जिलेका विटा। इनके भाई-बहनका जन्म भी विटा में ही हुआ और लालन-पालन विटा तथा कराडमें। लेकिन बालक यशवंत का जन्म 'देवराष्ट्र' गाँवमें अपने ननिहालमें ईसवी सन् १९१४ के मार्च १२ को किसान-परिवारमें हुआ। 'देवराष्ट्र' गाँव दक्षिण सातारामें बसे दूसरे सामान्य गाँवोंकी तरह बिल्कुल देहाती गाँव है। इनके मामा श्री दाजी घाडगेकी वहाँ अच्छी खासी खेती-बाडी थी। आर्थिक स्थिति अच्छी होने के कारण यशवंतरावके मामा की उनके गाँवमें हाँक पडती थी। बालक यशवंत जब डेढ वर्ष का था तबसे उसकी प्राथमिक शिक्षा पूरी होनेतक वह 'देवराष्ट्र' में ही रहा। मतलब उसका शैशव 'देवराष्ट्र' की गली-कूचोंमें ही बीता। 'देवराष्ट्र' के अन्न और जलसे ही उसके शरीरका गठन हुआ।

यशवंतरावके कुछ बडे होने पर मामा श्री दाजी घाडगेने उनका नाम प्राथमिक पाठशालामें दर्ज किया। शुरू से ही यशवंत पढनेमें तेज था। अतः सदा अपने गुरुओंकी कृपा संपादन करता रहता था। 'देवराष्ट्र' की पाठशालामें मराठी चौथी तक ही पढाई का प्रबन्ध था। अतः मराठी चौथी उत्तीर्ण करने पर उन्हें कराड आना पडा। कराडमें ममतामयी विठाबाई और ज्येष्ठ भ्राता ज्ञानोबा तथा गणपतरावके सान्निध्यमें यशवंतरावने मराठी सातवी उत्तीर्ण की। ज्येष्ठ बन्धु की तीव्र लालसा थी कि अंग्रेजी सीखकर यशवंतरावको अच्छी

सन् १९३० ईस्वीमें जब वे तिलक माध्यमिक शालामें पढ रहे थे, पूनामें रानडे वक्तृत्व प्रतियोगिता आयोजित की गई थी। बाल-वक्ताके रूपमें यशवंतराव इससे पहले ही काफी नाम कमा चुके थे। अतः उन्होंने पूनाकी वाक्-स्पर्धामें सम्मिलित होनेका मन ही मन निश्चय किया। लेकिन अँटीमें एक पाई भी न थी; कराडसे पूना कैसे जाएँ? बडी कठिन समस्या थी। लेकिन कहते हैं भगवान दीन दुखियों और कर्तव्यदक्षोंका बेली होता है। यशवंतरावकी समस्या भी हल हो गई; शिवाजी वटाणे नामक उनके एक मित्रने उनका अपनी मोटर सर्विससे पूना जानेका प्रबन्ध करवा दिया। यशवंतरावने पूना आकर वक्तृत्व-स्पर्धामें भाग लिया। परीक्षक थे स्व. श्री न. चिं. केलकर, स्व. श्री श्री. म. माटे, एवं स्व. श्री ज. श्री. करंदीकर। यशवंतरावको 'ग्रामसुधार' विषय पर दस मिनिट भाषण देनेके लिये कहा गया। उन्होंने अपने विषयका प्रतिपादन इतना तो प्रभावशाली ढंगसे और ओजस्वी वाणीमें किया कि परीक्षक-समितिने उन्हें दस मिनिट अतिरिक्त समय देकर अपना विषय सुचारु ढंगसे रखनेका आदेश दिया। इस स्पर्धा में यशवंतरावका प्रथम नम्बर आया और उन्हें १५० रुपयेका नकद पारितोषिक देकर सम्मानित किया गया।

शालेय जीवनमें ही हमें यशवंतरावके अटूट आत्म-विश्वास, दृढ मनोबल और अपूर्व निर्धार-शक्ति के दर्शन होते हैं। यशवंतराव तब अंग्रेजी चौथी कक्षाके विद्यार्थी थे। एक बार कक्षामें श्री शेणोलीकर गुरुजीने सभी विद्यार्थियों से प्रश्न किया कि उनकी अंतिम महत्वाकांक्षा क्या है? किसीने बताया कि मैं लोकमान्य तिलक बनना चाहता हूँ, तो किसीने कवि यशवंत बननेकी अपनी मनीषा प्रगट की। किसीने देशके लिए मर मिटनेकी तमन्ना बताई, तो किसीने डॉक्टर, वकील बनकर समाजसेवा करनेका बीडा उठाया। लेकिन जब यशवंतरावकी बारी आई तब उन्होंने अपने स्थानसे उठकर शांत पर धीर-गम्भीर वाणीमें कहा: "मैं यशवंतराव चव्हाण बनूँगा!" यह प्रत्युत्तर कितना अर्थगंभीर और रहस्यमय था। जो जवाब माध्यमिक शालाके एक विद्यार्थीने तपाकसे दे दिया क्या वह किसी स्नातक को भी कभी सुझेगा? यशवंतरावकी कुशाग्रबुद्धि और दृढ आत्म-निर्धारकी प्रतीति हमें इस उत्तरसे भली-भाँति हो जाती है।

यशवंतरावके राजकीय-जीवनका श्री गणेश तिलक माध्यमिक शालासे होता है। सन् १९३० के असहयोग आन्दोलनमें सक्रिय भाग लेनेका निश्चय कर यशवंतराव उसे अमलमें लानेकी कोशिश करने लगे। माध्यमिक शालाके प्रशस्त मैदानमें

नौकरी लग जाए, जिससे परिवारको सहायता मिले और घरकी स्थिति भी सुधर जाय। इसी आशामें उन्होंने यशवंतरावकी पढाई आगे जारी रखी और कराडकी तिलक माध्यमिक शालामें नाम दाखिल कराया। यशवंतराव मन लगाकर अभ्यास करते थे और अपनी मेधावी बुद्धिके कारण सफलता पर सफलता प्राप्त करते जाते थे।

यह सन् १९२७ का काल था। सदियोंसे गुलामीकी शृंखलाओंमें जकडे भारत देश और भारतीयोंको "स्वतंत्रता मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और उसे मैं लेकर ही रहूँगा" का मंत्र देनेवाले नरकेसरी लोकमान्य तिलककी मृत्युके पश्चात् पूज्य बापूके असहयोग-युगका उदय-काल था। लोकमान्य तिलकने देशकी आज़ादीका बिगुल फूँका था और परम पूज्य महात्मा गांधीने असहयोग-आन्दोलनके रूपमें स्वराज्य प्राप्त करनेका अमोघ शस्त्र दिया था। देशके कुछ युवक सशस्त्र क्रांतिके सपने देखकर माँ भारतीको गौराङ्ग महाप्रभुओंकी सत्तासे मुक्त करानेकी अभिलाषा रखते थे। और तदनुसार छिट-पुट घटनाएँ घटती जाती थीं। उपरोक्त घटनाओंके घात-प्रतिघात यशवंतरावके बाल-मानस पर भी हो रहे थे। महात्मा फुलेके 'सत्यशोधक समाज' के आन्दोलनका प्रतिबिंब भी उनके हृदय-दर्पण पर उठता जा रहा था। सामाजिक और आर्थिक विषमताका अनुभव उन्हें तीव्रतासे होने लगा था। वे सदा उदास और दुःखी दिखाई देते। लेकिन यह समझकर कि अपने भाग्यमें ही यह दुःख-दर्द लिखा है—मन ही मन अपने बाल-मनको समझा लेते। उनके मनकी अभी इतनी तैयारी नहीं थी कि विषमता के विरुद्ध विद्रोह कर उठें। अतः पढनेकी ओर ही उन्होंने अपना मन मोड़ना अच्छा समझा।

अतः वे लगनसे अभ्यासमें लग गये। उनके सामने केवल एक ही ध्येय था—पढना, पढना और पढना। उनका विद्यार्थी-जीवन किसी सामान्य विद्यार्थीसे अधिक उज्ज्वल और यशस्वी रहा। विद्यार्थी दशामें यशवंतरावको पाठ्यक्रमके अलावा बाहरी पठनपाठनका भी बडा चाव था। परिणामतः मराठी साहित्यकी तत्कालीन कृतियोंको वे भली-भाँति आत्मसात् कर सके। क्रीडा-रसिक होने पर भी दारिद्र्य-वश वे अपनी विद्यार्थी-अवस्थामें खेल न सके जिसका दर्द आज भी उनके मानसके किसी कोनेमें छुपा पडा है। मेधावी बुद्धि, अद्भुत प्रतिभा, चापल्य और दृढ मनोबलके साथ ही साथ यशवंतराव भाषण करनेकी कलामें सिद्धहस्त थे। वक्तृत्व-स्पर्धामें उन्होंने कई पारितोषिक जीते थे, जिसमें एक घटना विशेष उल्लेखनीय है, जो आज भी उनके मानस पर अंकित है।

जेलसे छूटने पर युवक यशवंतरावने पुनः अपना नाम तिलक माध्यमिक शालामें दर्ज़ कराया और राष्ट्रीय ज्वारके कारण शिक्षामें पडे खंडको पूरा करनेमें जी-जानसे लग गये। शालेय-जीवनमें मराठी, इतिहास और गणित विषयमें वे एक प्रतिभाशाली और मेधावी छात्र गिने जाते थे। उनकी स्मरण-शक्ति काफी अच्छी थी। शुरूसे ही वे गुरुदेव रवीन्द्रनाथके साहित्यके उपासक थे, उसमें भी उनकी कविताओंसे इन्हें विशेष लगाव था। जिस तरह यशवंतरावको बाह्य-पठन और ज्ञानोपासनाकी प्यास थी ठीक उसी प्रकार वे यदा कदा कलम भी चलाया करते थे।

जब वे मेट्रिकमें पढ रहे थे तब उनके एक शैशवके मित्र श्री लक्ष्मण जोशीकी जेलमें मृत्यु हो गई। यशवन्तरावको काफी सदमा पहुँचा और गर्व भी हुआ ऐसे राष्ट्रसेवी मित्रके अमर बलिदान पर। उन दिनों यशवंतराव सख्त बीमार थे। पर अपनी बीमारीकी तनिक भी परवाह किये बिना जोश ही जोश में एक निबंध लिख डाला, जिसका शीर्षक था 'ध्येयवादी योद्धा'। लेखमें जोशीकी अजरामर देशभक्तिकी भूरि भूरि प्रशंसा की गई थी। अपने शालेय जीवनमें उन्होंने 'शराबके दुष्परिणाम' विषयको आधार मानकर एक कहानी भी लिखी थी, जिसमें उन्होंने ज्येष्ठ बन्धुमें विद्यमान शराबकी लतसे एक परिवारके उखडनेकी करुण-कहानी पेश की थी। सन् १९३० के पश्चात् कराड और उसके आस-मन्तमें प्रख्यात बने छत्रपति 'शिवाजी मेला' की पद्य-रचना खुद यशवंतरावने ही की थी। इसी जमानेमें उन्होंने मेले और नाटकोंमें छोटी-मोटी भूमिकाएँ भी की। विद्यार्थी दशामें यशवंतरावने बालकविके रूपमें अच्छी ख्याति प्राप्त की। उनके काव्य और पद्योंमें तत्कालीन सरकारकी ताण्डव-लीला, भारतीयोंकी दुर्दशा और गुलामीके सींखचोंसे मुक्त होनेके लिए भारत-माताके विविध प्रयत्नोंकी झांकी स्पष्ट दृष्टिगोचर होती थी। उनकी पंक्ति-पंक्तिमें राष्ट्रीय विचारोंका वह सैलाब जोर मारता था कि पाठक-वर्ग स्वयं उसमें गोते लगाकर राष्ट्रीयताके वातावरणमें घुल-मिल जाता था। देशके लिए दीवाना बन जाता था। आज अगर यशवंतराव राजनैतिक अखाडेमें न होते तो निःसन्देह मराठी भाषाके सुप्रसिद्ध कवि और साहित्यकार बन जाते।

शालेय जीवनमें यशवंतरावको व्यायाम का भी बडा शौक था और आजकी तेजस्वी मुखमुद्रा ओर मज़बूत बांधा उसीका ज्वलंत उदाहरण है। व्यायामका शौक उन्हें अपने ज्येष्ठ भ्राता गणपतरावसे उत्तराधिकारमें मिला। उन्होंने ही आपको अखाडेमें उतरना सिखाया और दंगल-कुश्तीका रसिया भी! लेकिन

एक नीमका पेड था। यशवंतराव उस पेडकी सबसे ऊँची टहनी पर राष्ट्रध्वज फहराकर ध्वज-वंदन करते रहते। इस कार्यमें यशवंतरावके अलावा तीन चार अन्य मित्र भी भाग लेते थे। उस कालमें राष्ट्रध्वज फहराना, राष्ट्रके लिए काम करना आदि बातें राष्ट्र-द्रोह मानी जाती थीं। ब्रिटिश-सत्ता ऐसे आन्दोलनका पूरे बलसे दमन करने में लगी हुई थी; और जो ऐसे कार्योंमें भाग लेता था वह बागी समझा जाता था। सरकार उसे वर्ष, डेढ वर्ष, दो वर्षके लिए सीखचोंके पीछे ढकेल देती थी। तिलक माध्यमिक शालाका ध्वज-प्रकरण भी हवाकी तरह शिक्षणाधिकारीके कानों पर पहुँच गया। तत्कालीन शिक्षणाधिकारी पहले से ही तिलक शाला पर दाँत लगाए हुए थे। वे ऐसे किसी अच्छे मौकेकी ताकमें ही थे। बस, फिर उन्हें क्या चाहिए ? उन्होंने यशवंतराव और शालाके प्रधानाध्यापकको फौरन अपनी कचहरीमें बुला भेजा। सबके सामने यशवंतरावसे पूछा गया: "ध्वजवंदन तुम किसकी अनुमतिसे करते हो ?" प्रत्युत्तरमें यशवंतरावने निर्भयतासे कहा: "स्वयंस्फूर्ति से!" यशवंतका जवाब सुनकर शिक्षणाधिकारीका मुँह उतर गया। उसकी बई-बनाई योजना मिट्टीमें मिल गई। शाला पर किसी प्रकारका दोषारोपण करनेमें वह असफल सिद्ध हुआ।

शिक्षणाधिकारीकी आंतरिक इच्छा थी कि यशवंतराव इस कार्य को बढावा देनेवाले व्यक्तिका नाम-निर्देश कर दे ताकि शालाकी मान्यता निकाल ली जाए और उसकी किस्मतका पासाँ पलट जाए। पर यशवंतराव भी कच्ची गोली न खेले थे। उन्होंने कुछ भी नहीं बताया और शिक्षणाधिकारीको अपना सा मुँह लेकर रह जाना पडा।

ध्वज-प्रकरण शांत हो जाने पर भी यशवंतराव चुप न बैठ सके। वह जमाना ही देशके लिये मरमिटनेवालोंके अमर बलिदान और जोशका था। यशवंतराव भी अपने विद्यार्थी साथी-संगियोंके साथ मिलकर देश-सेवामें जुटे हुए थे, जिसमें श्री डोईफोडे, श्री दयार्णव कोपर्डेकर आदि मुख्य थे। २६ जनवरी १९३२ के दिन वे अपने एक साथी के साथ पुलिस द्वारा गिरफतार किये गये। घटना ऐसी बनी कि २६ की रातमें कोई १२ से २ बजे के समय यशवंतराव अपने साथी श्री फोडे, श्री कोपर्डेकर आदिके साथ कराड पुलिस चौकीकी दीवार पर आजादीका घोषणा-पत्र लगाने गये थे। पुलिसको नींदमें झोंकें खाते देखकर वे आगे बढ घोषणा-पत्र चिपका ही रहे थे कि अचानक पुलिसने धर दबाया। दूसरे साथी तो पीछेकी गलीसे नौ दो ग्यारह हो गये। पर यशवंतराव बच न सके और इस प्रकरणको लेकर उन्हें १८ महीनेकी सख्त कैदकी सजा हुई।

राष्ट्रीय कार्योंमें अत्यधिक व्यस्त रहनेके कारण वे व्यायामपटु और साहित्यिक के रूपमें यश और कीर्ति अर्जित न कर सके पर उनमें निर्मल स्वभाव, निर्भय-वृत्ति स्पष्टवादिता और एक साहसी के सभी गुण तथा काव्यदृष्टि और एक कविकी भावुकता अवश्य आ गई है, जिसके दर्शन समय-समय पर होते रहते हैं।

कई विद्यार्थियोंका ध्येय परीक्षामें अधिकाधिक मात्रामें गुणांक प्राप्त करना और प्रथम श्रेणीमें उत्तीर्ण होना होता है, ताकि अच्छी से अच्छी नौकरी आसानीसे प्राप्त हो, भावी जीवन सुखी और समृद्ध बने। ऐसे विद्यार्थीका झुकाव अध्ययन-मनन और विद्याका रहस्य जान लेनेके बजाय रट्टू तोतेके ज्ञानकी ओर होता है। परीक्षा होते ही वह पुस्तकों से मुँह मोड लेता है और व्यावहारिक जीवनके चक्रमें जुट जाता है। लेकिन यशवंतरावका जीवन-ध्येय ऐसा न था। वे विद्याको मानव-जीवनका प्रधान ध्येय मानते थे। विद्या बिना मनुज पशु समाना —यह उनका ब्रीद वाक्य था। समाज, जाति एवं देशमें फैली विषमताकी आँधी को दबाना है तो संस्कारके साथ ज्ञानोपासना भी परमावश्यक है। वे प्रायः विषयकी नींवमें पहुंचकर गहराईसे उसका तौल-माप निकालकर अपने निर्णय निश्चित करते हैं। तभी तो यशवंतराव की वाणीमें हमें सजीवताके दर्शन होते हैं और लोगोंको उनकी वाणी तथा वृत्तिसे वैचारिक स्फूर्ति मिलती है।

शालेय-जीवनकी भाँति यशवंतराव का कॉलेज-जीवन भी यशस्वी रहा है। कहते हैं कि 'विद्या विनयेन शोभते' यह सूक्ति यशवंतराव पर सोलह आने बारह रती खरी उतरती है। उन्होंने अपनी पैनी बुद्धि, अद्‌भुत प्रतिभा, निर्भीक मनोवृत्ति, विवेकी वर्तन और विनयी स्वभावसे कॉलेजके अधिकारियों तथा प्राध्यापकोंका प्रेम और कृपा संपादन की थी। मराठीके सुप्रसिद्ध उपन्यासकार प्राध्यापक ना. सी. फडकेकी 'तर्कशास्त्र' पढानेकी अद्‌भुत शैलीसे वे बेहद खुश थे। और उसका ज्वलंत उदाहरण यह है कि उन्होंने अपने कॉलेज-जीवनमें कभी भूलकर भी प्रा. फडकेका पिरीयड नहीं छोडा। डॉक्टर बालकृष्णके प्रिय विद्यार्थियोंमेंसे वे एक थे। आर्थिक-विषमताके कारण वे यथासमय कालेज-फीस दे नहीं सकते थे। किंतु डॉक्टर बालकृष्णको यशवंतरावकी राष्ट्रीय वृत्ति और देशकी आजादीके लिए मरमिटनेकी तमन्नासे आंतरिक लगाव था; अतः फीसके कारण उन्हें कभी परीक्षामें रुकना न पडा। इंटरके ऐन परीक्षाके समय सख्त बीमार होने के कारण कॉलेजकी टर्म भर नहीं सके—अतः बहुत दुःखी हुए। लेकिन डॉक्टर बालकृष्णने विशेषाधिकारका उपयोग कर उन्हें परीक्षामें सम्मिलित होनेकी अनुमति प्रदान की।

यशवंतरावके कॉलेज-जीवनके एक घनिष्ट मित्र थे श्री राघुअण्णा लिमये। श्री लिमये आजकल सातारा जिला ग्रामोद्योग संघके अध्यक्ष हो, राष्ट्रीय-विचार-धारासे ओत-प्रोत हैं। वे प्रायः राजनीति, आर्थिक विषमता, सत्यशोधक समाजके कार्य, देशकी आजादी और देशी नौकरशाहीके दमन-चक्रसे त्रस्त निरीह जनताकी मुक्तिके बारेमें यशवंतरावसे घंटों बहस और सलाह-मशविरा करते रहते थे। उस समय यशवंतराव पर सुप्रसिद्ध क्रांतिकारी स्व. कलंबे गुरुजीकी विचार-धारा और स्वातंत्र्य-वीर बॅरिस्टर सावरकरजीकी कृति 'माझी जन्मठेप' का अच्छा-खासा प्रभाव पडा। स्वर्गीय कलंबे गुरुजीको यशवंतरावकी प्रेरणा-मूर्ति भी कहे तो अतिशयोक्ति न होगी। कलंबे गुरुजीने राष्ट्र-सेवाका मूल-मंत्र लोकमान्य तिलकसे पाया था। लोकमान्य तिलक पर जब पुलिसकी कडी निगरानी थी तब कलंबे गुरुजी पूनाकी ट्रेनिंग कॉलेजमें अध्ययन कर रहे थे। देश-सेवाका आव्हान मिलने पर कलंबे गुरुजी और उनके १५० शिक्षक-साथियोंने सरकारसे विद्रोहकर गोरे अफसरोंका खून करनेका षड्यंत्र रचा। मौका पाकर कलंबे गुरुजीने अपनी योजना लोकमान्य तिलकको पर्वती और एस. पी. कॉलेजके दरमियान गुप्त रूपसे मिलकर बताई। लेकिन लोकमान्यने उस समय योजनाको ठुकराते हुए कहा कि शिक्षकोंको आन्दोलन और ऐसे कार्योंमें भाग नहीं लेना चाहिये। बल्कि उन पर तो भारतकी भावी पीढी तैयार करनेकी बहुत बडी जिम्मेदारी है। अतः उन्हें चाहिए कि वे प्रत्येक पाँच-पाँच ऐसे विद्यार्थी तैयार करें, जो देशकी आजादीकी नींवका पत्थर बन सके। स्व. कलंबे गुरुजीने लोकमान्यकी बात मानकर विद्यार्थी तैयार करनेका मार्ग अपनाया। उन्होंने प्रायः अपने विद्यार्थियोंको देश-सेवा, जनहित और कर्त्तव्यनिष्ठाका पाठ पढाया। परिणामस्वरूप स्वर्गीय कलंबे गुरुजीके शुद्ध आचरण, क्रांतिकारी विचार और कार्यप्रणालीका यशवंतराव पर अच्छा असर पडा। साथ ही सावरकरजीकी कृतिसे प्रेरित हो कर वे मन ही मन सशस्त्र क्रांतिकी ओर खींचे जा रहे थे। और इस तरह देशको गुलामीकी बेडियोंसे आजाद करानेके सपने देखा करते थे। उनके इन क्रांतिकारी विचारोंमेंसे ही श्री सावरकजीकी प्रत्यक्ष भेंट लेकर उनसे विशेष वार्तालाप करने की मनीषा का प्रादुर्भाव हुआ। परिणामतः मित्र श्री राघुअण्णा लिमयेको साथ लेकर वे रत्नागिरीकी ओर पैदल ही चल पडे। जब वे रत्नागिरी पहुँचे, तब सावरकरजी अपने मित्रोंके साथ बैठे ताश खेल रहे थे। यशवंतरावने श्री सावरकरजीसे सशस्त्र क्रांतिके बारे में सविस्तार चर्चा की और कोल्हापुर लौट पडे।

उन्हीं दिनों सशस्त्र-क्रांतिकी एक योजना कार्यान्वित करनेके लिए वाईके तर्कतीर्थ श्री लक्ष्मणशास्त्री जोशीजीने अखिल महाराष्ट्रके सुशिक्षित नौजवानोंका एक संगठन बनाया था। यशवंतराव उस समय कोल्हापुरके राजाराम कॉलेजके विद्यार्थी थे। उनका भी तर्कतीर्थ श्री लक्ष्मणशास्त्री जोशीजीके संगठनसे थोडा बहुत सम्बंध था। क्रांतिकारियोंने चुपके-चुपके शस्त्र और बारुदका संचय किया। क्रांतिके लिये जरूरी सभी साधन जुटाकर उसे सफल बनाना ही सभीका मनोदय था। यशवंतरावको भी सावरकरजीकी 'माझी जन्मठेप' पुस्तकका पठन एवं बंगालके क्रांतिकारियोंके वीरोचित कार्योंके प्रति सम्मान भावनाके कारण सशस्त्र क्रांतिसे जरा-जरा लगाव हो गया था। लेकिन सशस्त्र क्रांति सफल हो जाने पर राजनीतिक दृष्टिसे देशको जो लाभ होगा उससे कई गुनी हानि उसे सशस्त्र क्रांतिके असफल होने पर होगी—और देशकी हानि सामान्य जनताकी हानि। देशी नौकरशाही इसका बदला गरीब बिचारी प्रजासे लिये बिना नहीं रहेगी—ये विचार उनके युवक और उत्साही हृदयको हर समय कोसते रहते थे। अतः उनकी मनःस्थिति डाँवाडोल हो गई। आखिरकार सत्यकी विजय हुई और दीर्घकालीन मनोमंथनके पश्चात् उन्होंने सशस्त्र-क्रांतिका परित्याग ही योग्य समझा।

ठीक उन्हीं दिनों यशवंतराव कोल्हापुरकी जिस चॉलमें दूसरे विद्यार्थी-सहयोगियोंके साथ रहते थे वहाँ एक बार चोरी हो गई। उसमें उनकी कॉलेज फीस ही चुरा ली गई। परीक्षा सर पर सवार थी। फॉर्म भरनेकी अंतिम तिथि दूसरे दिन थी और यहाँ फॉर्म-फीसके भी लाले पड गये। ऐन समय पर फीस भरी न गई तो परीक्षामें कौन बैठने देगा? उनके सामने निराशाका गहरा सागर लहरा रहा था। कोई रास्ता नजर नहीं आ रहा था कि अचानक उनके मित्र श्री गौरिहर सिंहासनेकी भेंट हो गई। उन्हें वास्तविक स्थितिका पता लगा। उन्होंने फीसकी रकम शीघ्र ही भर दी। "A friend in need is a friend indeed!" की तरह उत्कट मित्र-प्रेमके कारण यशवंतराव इस मुसीबतसे बाल बाल बच गये और परीक्षामें सम्मिलित होकर सफल सिद्ध हुए। इस तरह कारां और शालाका चक्कर लगाते हुए सन् १९३९ में बी. ए. तथा सन् १९४१ में एल. एल. बी. की उपाधियाँ यशवंतरावने प्राप्त कीं।

४ : राजनैतिक जीवनका प्रारम्भ

हमारे प्रधान मंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरूने अपने 'डिस्कवरी ऑफ इन्डिया' ग्रंथमें लिखा है कि, "महात्मा गान्धीने काँग्रेस संगठनको जनतांत्रिक और समाज संगठनका विराट् स्वरूप प्रदान किया। महात्मा गान्धीके आगमन पूर्व भी काँग्रेस जनतांत्रिक ही थी, लेकिन तब उसकी मर्यादा केवल धनिक-वर्ग और पढे-लिखे लोगोंतक ही सीमित थी। जब कि महात्मा गान्धी उसमें किसान, मध्यमवर्ग और विभिन्न पेशेवाली सामान्य जनताको लाये धनिकोंकी काँग्रेसको दीन-दुखियोंका प्रतिनिधित्व करनेवाली संस्था बनाया।"

पूज्य बापूके इस नये दृष्टिकोणसे सत्यशोधक समाजके जन्मदाता महात्मा फुलेका वर्षों पुराना स्वप्न साकार हो उठा। सन् १८८९ में बम्बईमें काँग्रेसका पाँचवा अधिवेशन हुआ। उस समयकी काँग्रेस और महात्मा गांधीकी काँग्रेसमें जमीन अस्मानका अंतर था। महात्मा फुलेसे न रहा गया। उन्होंने गरीब किसानका २० फीट ऊँचा अर्धनग्न पुतला तयार करवाया और उसे काँग्रेस अधिवेशनके भव्य द्वार पर खडा किया। पुतलेके एक हाथमें हंसिया था और दूसरेमें तख्ती, जिस पर लिखा हुआ था कि, "काँग्रेस राष्ट्रीय संस्था नहीं हो सकती क्यों कि इसमें गरीब किसान और मेहनत कशों का एक भी प्रतिनिधि नहीं है।" लेकिन पूज्य बापूने एक नया रंग ही भर दिया काँग्रेसके बनाव-सिंगारमें। परिणामतः सत्यशोधक समाजका नेता वर्ग संतुष्ट नजर आ रहा था और दिन-ब-दिन वह काँग्रेस की ओर अधिकाधिक मात्रामें आकृष्ट हो रहा था। इसमें श्री केशवराव जेधे जैसे अग्रगण्य थे। महाराष्ट्रके कोने कोनेमें काँग्रेसका प्रचार और प्रसार धडल्लेसे होने लगा था। सामाजिक विषमताको हटानेके लिए उठा हुआ बवण्डर राष्ट्रीय-विचार-धारामें शमन हो गया।

महाराष्ट्रकी राजनीतिमें कोल्हापुर एक देशी रियासत होने पर भी महत्वपूर्ण स्थान रखती थी। वहाँ पर सत्यशोधक समाज द्वारा संचलित आन्दोलनका जोर था। तत्कालीन कोल्हापुर नरेश छत्रपति श्री शाहू महाराजकी वृत्ति भी महात्मा फुलेके सत्यशोधक समाजकी नीति, सिद्धांत और नियमसे अनुकूल थी। अतः जिन लोगोंको दरबारी-कार्य तथा प्रशासनसे दूर ठेल दिया गया था—वंचित कर दिया गया था। उन्हें, उन्होंने उत्तरदायित्व-पूर्ण स्थानों पर प्रतिष्ठित किया। शाहू महाराज अच्छी तरह जानते थे कि जिन लोगोंकी जिस स्थान पर नियुक्ति

हुई हैं—शैक्षणिक दृष्टिसे वे योग्य न भी हों, लेकिन उनमें उस स्थान पर काम करने की क्षमता अवश्य है। उनकी प्रतिभा और मेधावी बुद्धि कुछ दिनोंके अनुभव के बाद प्रशासनमें उन्हें अवश्य पारंगत बना देगी। लेकिन छत्रपति का यह कार्य रियासत के शिक्षित वर्ग को फूटी आँखों भी न भाया। उन्होंने महाराजके विरुद्ध आवाज उठानी शुरू की। लेकिन उन्हें यह पता न था कि जिन्हें अपने जीवनमें पढाई-लिखाईका अवसर न मिला उन्हें राजकीय कार्योंमें समानताका साझीदार बनानेके लिए योग्य बनाना परमावश्यक हैं। आज भी जनतंत्रमें यही हो रहा है। हमारे देशके प्रगतिशील विचार-धाराके दल और नेतागण हरिजन, आदिवासी, अल्पसंख्यक एवं पिछडी जातिके प्रतिनिधियोंको हर स्थान पर काम करनेका अवसर दे रहे हैं।

शाहू महाराजने सुविधा वंचित (unprivileged) लोगोंको राज्य-प्रशासन में केवल ऊँचे ओहदे ही नहीं दिये बल्कि युग-युगांतरसे शैक्षणिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक विकाससे पूर्णतया वंचित हुए ढोरोंका-सा जीवन बितानेवाले बहुजन समाजकी प्रगति और उन्नतिके हर संभव प्रयत्न किये। उन्होंने फीसकी सुविधा दी, स्कॉलरशिपकी योजना की और विद्यार्थियोंको रहनेके लिए निःशुल्क छात्रालय निकाले। उन्होंने यह सुविधा केवल अपनी रियासती प्रजा तक ही सीमित न रखी बल्कि कोल्हापुर रियासतके अलावा पिछडी जातिके सभी विद्यार्थी-विद्यार्थियोंके लिए यह सुविधा जारी रखी।

यशवंतरावकी विद्यार्थी-अवस्थाका महत्वपूर्ण काल कोल्हापुरमें व्यतीत हुआ है। अतः सत्यशोधक समाजके प्रगतिशील कार्योंकी आदिसे अंत तककी जानकारी यशवंतरावको है और इसीलिए ऐसे कार्योंके प्रति प्रायः इनके मनमें अपनेपनकी भावना रहती है। यह सब होने पर भी इन्होंने अपनी काँग्रेस-विषयक नीति और राष्ट्रीय विचारोंमें जरा भी परिवर्तन नहीं आने दिया। वे प्रायः काँग्रेसकी नीति और दृष्टिकोणसे बहुजन समाजकी समस्याओं पर विचार करते हैं और हल खोज निकालते हैं। उनकी इस राष्ट्रीय-निष्ठाका उत्कृष्ट उदाहरण है सन् १९२९ की कराड म्युनिसिपैलटीके चुनाव! उस समय उन्होंने अपने अलौकिक धैर्य और उत्कृष्ट राष्ट्रभक्तिका उदाहरण पेश किया। उस चुनावमें उनके ज्येष्ठ बन्धु श्री गणपतराव एक उम्मीदवार थे। लेकिन काँग्रेस उनके विरुद्ध थी। अतः यशवंतरावने अपने ज्येष्ठ-बन्धु के विरुद्ध घर-घर जाकर प्रचार किया और उन्हें चुनावमें हराया। यशवंतरावकी अद्‌भुत ध्येयनिष्ठामें बन्धु–प्रेम रोडा अटका न सका।

यशवंतरावने राजनैतिक-शिक्षाका प्रथम पाठ पूना जेलमें लिया। वह सन् १९३१ का जमाना था। यशवंतराव उस समय कराडके तिलक माध्यमिक शालाके विद्यार्थी थे। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी द्वारा प्रारम्भ किये गये असहयोग आन्दोलनमें महाराष्ट्रके कोने-कोनेसे सत्याग्रहियोंके जो जत्थे उमडे पडे थे उसमें सातारा जिलेके जत्थेमें ज्यादातर तरुण और किशोरोंकी भर्ती थी। ये तरुण और किशोर समाजके सभी वर्गोंमेंसे थे। इसी जत्थेमें किशोर यशवंतराव भी एक थे। पूना-विसापुर जेलमें वे 'बेक बेंचर' कहलाते थे।

पूनाकी यरवदा सेन्ट्रेल जेल उन दिनों सारे देशमें प्रख्यात हो चुकी थी। देशके विभिन्न भागों में गिरफ्तार किये गये असंख्य राजनैतिक कार्यकर्ताओंका वह तीर्थधाम बन गई थी। यहाँ मद्रासी भी थे, बंगाली भी थे और हिमालयके बेटे भी बन्द थे। देशकी सभी भाषा, रीतिरिवाज और पोषाकका सुन्दर संगम जेलमें देखनेको मिलता था। कराडसे आये हुए जत्थे में यशवंतराव के अलावा श्री दयार्णव कोपर्डेकर, श्री गौरिहर सिंहासने, श्री राघुअण्णा लिमये, श्री हरिभाऊ लाड आदि मुख्य थे। जब कि राजस्थानके जननेता श्री गोकुलभाई भट्ट, गांधीजीके पत्र 'यंग इन्डिया' के संपादक श्री मोहनभाई भट्ट, हिमालयके आश्रमवासी स्वामी सुरेंद्रजी, बम्बईसे प्रकाशित मराठी दैनिक लोकसत्ताके सम्पादक श्री ह. रा. महाजनी, भाई भुस्कुटे, प्रजासमाजवादी नेता श्री एस. एम. जोशी आदि यरवदा सेन्ट्रेल जेलके बैरक नवम्बर १२ के भूषण कहलाते थे। यरवदा सेन्ट्रेल जेलमें यशवंतराव और श्री कोपर्डेकरने श्री ह. रा. महाजनी की निगरानीमें प्रथम बार महाकवि कालिदास कृत संस्कृत कृति 'शाकुंतल' का वाचन कर उसके अर्थको आत्मसात करनेका प्रयत्न किया। ठीक वैसे ही भाई भुस्कुटे की मार्क्सवाद प्रणीत विचार–धारा तथा निरीश्वरवाद और श्री महाजनीके ईश्वरवाद गीता आदि परके हरएक प्रवचनोंमें उपस्थित रहकर उसमें रहे रहस्यको समझनेका पूरा प्रयास किया था। साथ ही उन्होंने गुजराती और उर्दू भाषाका विशेष अध्ययन भी यहीं पर किया था।

कुछ दिनोंके बाद यरवदा बैरक नम्बर १२ के सभी राजनैतिक कैदियोंको विसापुर जेलमें भेज दिया गया। वहाँ उनके साथ कराडके श्री लिमये, कोपर्डेकर, सिंहासन थे ही। उस समय विजापुर जेल यानी महाराष्ट्रके जाने-माने चोटीके राजकीय नेताओंका अड्डा था। गांधीवादके प्रबल समर्थक और प्रवक्ता आचार्य भागवतजीके राजनैतिक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक पाथेयसे परिपूर्ण प्रवचन रातमें नियमन रूपसे हुआ करते थे। समाजवादी तत्त्वज्ञानके अधिकारी

वक्ताके रूपमें बम्बई राज्यीय प्रजा-समाजवादी दलके नेता साथी एस. एम. जोशी भी बडी खूबीसे समाजवादी तत्वोंकी संजीवनी पान कराते थे। भारतके कृषि-मंत्री श्री स. का. पाटील अपनी ओजस्वी वाणीमें 'पत्रकार तथा पत्रकारीत्व' विषयकी बारिकियोंको हृदयंगत कराते हुए देश-विदेशके 'जर्नालिज्म' का इतिहास राजबंदियोंके सामने रखते थे और स्वेच्छया तीसरा वर्ग लेनेवाले रावसाहब पटवर्धन सत्याग्रहियोंको गांधीवादकी खूबियोंसे परिचित कराते थे। इस तरह वैचारिक संघर्षमें, यशवंतरावको राजनीतिक क्षितिजके नवरंगोंको जानने और परखनेका अवसर मिला, जिसका इनके भावी जीवनको गठित करनेमें बहुत बडा हाथ है।

सन् १९३६ से १९३९ तककी सातारा जिला काँग्रेस समिति, महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेसके लिए सिरदर्दका एक बडा विषय बन गई थी। उस समय महाराष्ट्र प्रदेश कांग्रेसका नेतृत्व श्री शंकरराव देव और उनके गांधीवादी साथियोंके हाथ में था। जब कि सातारा काँग्रेस समितिमें गांधीवादी कार्यकर्ताओंके बजाय रॉयिस्ट और समाजवादी कार्यकर्ताओंकी अधिक भीड थी। अतः पूनासे किसी न किसी कार्यकर्ताका आगमन सातारा होता ही रहता था। ऐसे समय तासगाँवमें तर्कतीर्थ श्री लक्ष्मणशास्त्री जोशीके नेतृत्व में सातारा जिला राजनीतिक परिषद हुई, जिसमें श्री मानवेन्द्रनाथ रायकी विचारधाराका समर्थन कर परिषदने उसमें अपना विश्वास व्यक्त किया। आजके क्रांतिसिंह श्री नाना पाटील उस समय शत-प्रतिशत गांधीवादी थे। रॉयकी विचार-धारा का समर्थन करनेका अर्थ उन्होंने महात्मा गान्धीके प्रति अविश्वासकी भावना समझा और उन्होंने अपने साथी-कार्यकर्ताओंकी सहायतासे परिषद को ही भंग कर दिया। इस घटनासे युवक यशवंतके मनको बहुत व्यथा हुई। वे उदास होकर कराड लौटे।

सन् १९३५ के समय कुछ नौजवान कार्यकर्ताओंने मिलकर काँग्रेस दलके अंतर्गत ही बम्बईमें अखिल भारतीय काँग्रेस समाजवादी दलकी नींव रखी। इन कार्यकर्ताओंमें सर्वोदयवादी नेता श्री जयप्रकाश नारायण, प्रजा-समाजवादी दलके अध्यक्ष साथी अशोक मेहता, जनरल सेक्रेटरी श्री ना. ग. गोरे, श्री अच्युत पटवर्धन आदि मुख्य थे। लेकिन स्वर्गीय मानवेन्द्रनाथ रॉय इसके प्रबल विरोधी थे। उनके कथनानुसार काँग्रेस और समाजवाद परस्पर विरोधी विचार-धारा हैं। वे कभी एक-दूसरेकी सहायक नहीं बन सकती और उन्होंने अपना यह मत काँग्रेस समाजवादी दलके नेताओंको अकाट्य-दलीलोंके साथ लिख भेजा, जो "Letters to the C. S. P." के नामसे प्रसिद्ध है।

उस समय 'रॉयिस्ट' नामका जो एक अधिकृत गुट तैयार हुआ, उसमें यशवंतराव प्रमुख थे। इसके पूर्व यशवंतराव खुद महाराष्ट्र काँग्रेस समाजवादी दलके अध्यर्यु हो, प्रादेशिक इकाईकी स्थापनामें इनका सक्रिय साथ था। कॉलेज-जीवनसे ही उनका सम्बन्ध समाजवादी विचार-धाराके नौजवानोंसे आया था। लेकिन अन्य लोगों जैसी उनमें अंधश्रद्धा न थी। उस समय उनके साथ श्री ह. रा. महाजनी, तर्कतीर्थ श्री लक्ष्मणशास्त्री जोशी आदि कई नौजवान कार्यकर्ता महाराष्ट्र इकाईकी काँग्रेस समाजवादी दलमें थे। लेकिन साथी अच्युत पटवर्धनको रॉयवादियोंका इस तरह सामुदायिक रूपसे काँग्रेस समाजवादी दलमें बने रहना कतई पसन्द न था। परिणामस्वरूप जब कार्य समितिके चुनावका समय आया तब श्री ह. रा. महाजनी मंत्रीपदके लिए खडे हुए तो साथी अच्युत पटवर्धन श्री महाजनीकी उम्मीदवारीके सख्त विरोधी बन गये लेकिन जब उन्हें ज्ञात हुआ कि सातारा जिलेके यशवंतरावसह छोटे-बडे सभी कार्यकर्ता श्री महाजनीके पीछे खडे हैं तब उन्होंने अपना विरोध छोड दिया। आगे सन् १९३१ में जेलसे रिहा हो, बाहर आकर स्व. मानवेन्द्रनाथ रायने काँग्रेस समाजवादी विचार-धाराका प्रबल विरोध कर एक दलके अन्तर्गत दूसरे विचार-प्रवर्तक दलके अस्तित्वको असंगत बताया। तब रॉयवादियोंने सामूहिक रूपसे काँग्रेस समाजवादी दल परित्यागकी योजना बनाई। श्री महाजनी सातारा जिलेके कार्यकर्ताओंका समर्थन प्राप्त करनेकी मनीषा लेकर कराड गये। कराडमें जिलेके कार्यकर्ताओं की बैठकमें यशवंतरावने श्री महाजनीकी योजनाका सख्त विरोध कर उन्हें स्पष्ट सवाल किया, "महाजनी साहब, जिस तरह समाजवादी दलमें सम्मिलित होनेकी आवश्यकता का प्रतिपादन करते हुए आपने हमसे विचार-विनिमयकर निर्णय किया था, ठीक उसी तरह त्यागपत्र देकर दल-त्याग क्यों करना चाहिए यह ठीकसे समझाया नहीं। ऐसा अंधानुयायित्व स्वीकार करनेके लिए मैं कतई तैयार नहीं।"

लेकिन रॉय साहबकी नवमानवतावादी बातोंसे वे अछूते न रह सके। उन्होंने समाजवादकी परिभाषा एक नये दृष्टिकोणसे रखी थी और जोर-शोरसे नवमानवतावादका प्रचार एवं प्रसार किया—तब यशवंतराव भी उसके प्रति आकर्षित हो कर रॉय-गुटमें सम्मिलित हो गये। उस समय वे तर्कतीर्थ श्री लक्ष्मणशास्त्री जोशी, श्री जी. डी. पारिख, श्री ह. रा. महाजनी, बॅरिस्टर तारकुंडे, श्री वि. वि. कर्णिक आदि रॉयवादी कार्यकर्ताओंके साथ अपना अभिष्ट ध्येय पूर्ण करनेके लिए अहर्निश सलाह-मशविरा, अभ्यास और प्रचारके लिए एक

पाँव पर तैयार खडे रहते थे। लेकिन वे अधिक काल तक 'रॉयिस्ट' भी न रह सके। विश्व जब दूसरे महायुद्धकी विभीषिकामें उलझा हुआ था और ब्रिटिश सत्ताने भारतीय नेताओंसे चर्चा-विचारणा किये बिना ही हमारे देशको युद्धमें झोंक दिया तब राष्ट्रीय काँग्रेसने सरकारको कडे शब्दोंमें चेतावनी देकर उसके इस कार्यका सख्त निषेध किया। उसने देशकी आजादीके लिए आखिरी जंग खेलनेकी ठानी। ऐसे समय रॉयिस्ट-गुटने अपना चोला बदला और वह क्रांतिकारी न रहकर, ब्रिटिश सरकार तथा देशी नौकरशाहीका सहयोगी बन गया। 'रॉयिस्ट' सामूहिक रूपसे काँग्रेस बाहर होकर राष्ट्रविरोधी कारवाइयोंमें ब्रिटिशोंका साथ देने लगे। भारतकी स्वाधीनताके बारेमें हमारा विवेकी (Rational) दृष्टिकोण है और इसीलिए हमें खुद-ब-खुद स्वराज्य मिलेगा—ऐसी रॉयिस्टोंकी मान्यता थी लेकिन काँग्रेस इस दृष्टिकोणकी कट्टर विरोधी थी। उसकी मान्यता 'स्वतन्त्रता-प्राप्तिके लिए सत्तारूढ-गुटसे मोर्चा लेना ही पडेगा' ऐसी थी। उस समय रॉयिस्टोंकी मान्यता कैसे गलत थी इसका पता हमें एक अंग्रेज दार्शनिकके निम्नांकित उद्गारोंसे भली-भाँति लग सकती है :

"जो बुद्धिकी कसौटी पर उतरता है वह योग्य होता है, ऐसी बात नहीं। बल्कि जो अनुभव होता है वही योग्य होता है।" कालान्तरसे यशवंतरावका रॉयिस्ट मोह उतर गया और वे पुनः काँग्रेसमें सम्मिलित हो गये।

५ : अध्ययनशील राजनेता

वैचारिक और दूरदर्शी नेताके रूपमें प्रसिद्ध हुए यशवंतरावके विचार और व्यक्तित्व लोहकवचकी तरह अभेद्य है। एक बार निश्चितकर अंगिकार की हुई भूमिकाको लाख मुसीबतें पडने पर या आपत्तियोंका पहाड़ टूट जाने पर भी वे नहीं छोडते। बल्कि उसका धैर्यसे सामना करते हैं। संयुक्त महाराष्ट्र निर्मितिके लिए शुरूसे अंत तक वे प्रयत्नशील रहे। उसके लिए आवश्यक सभी प्रामाणिक प्रयत्न किये; लेकिन भारतीय गणतंत्रकी सर्वोच्च सत्ता संसदने जब विशाल द्विभाषिकके पक्षमें अपना फैसला दिया तब गणतंत्रके

हितार्थ उन्होंने भारतीय संसदका निर्णय मान्य कर उसे कार्यान्वित करना अपना आद्य कर्तव्य समझा और तदनुसार उसका महाराष्ट्रकी बस्ती, पुरवा, गाँवों, कस्बों और शहरोंमें प्रचारकर सफल बनाने हेतु उन्होंने जो परिश्रम उठाये—उसे देखते हुए हमें निःसंकोच कहना पडेगा कि यशवंतराव यानी विचार, यशवंतराव यानी आचार और यशवंतराव यानी प्रचार अर्थात् आचार-विचार-प्रचार रूपी त्रिवेणी-संगमके दर्शन अकेले यशवंतरावमें ही होते हैं। विशाल द्विभाषिक बम्बईके प्रथम मुख्य-मंत्री चुन लिये जाने पर उत्तर सातारा जिला काँग्रेसने उनका सार्वजनिक अभिनंदन कर 'सुप्रसिद्ध पुरोगामी क्रांतिकारी विचार-धाराके नेता' के रूपमें उल्लेख किया। यह उनका वास्तविक गुणगौरव था और भारतीय प्रजातांत्रिक आन्दोलनकी प्रगति और विजय दिन-ब-दिन कैसी होती गई उसका ज्वलंत उदाहरण! जिसमें एक किसानका बेटा अपनी कर्तव्यनिष्ठा एवं कार्य-कुशलतासे भारतके सबसे बडे और समृद्धशाली राज्यका मुख्य मंत्री बन सका।

यशवंतरावको बचपनसे ही बाह्य-पठनका काफी शौक रहा है। ठीक उसी तरह मनन और जीवनकी सूक्ष्म भावसे अनुभूति प्राप्त करनेकी जिज्ञासा भी उनमें बनी रही है। अपने शालेय जीवनमें और कारावासमें उन्हें अधिकाधिक अध्ययन, मनन और पठन करनेका अवसर मिला और परिणाम स्वरूप एक नया दृष्टिकोण भी। जागतिक राज्य-क्रांतियाँ, विविध देशोंके आजादी-जंग, ऐतिहासिक चरित्र-माला, ललित साहित्य आदि विषयोंके अनेकविध ग्रन्थोंको उन्होंने उथल-पुथल दिया हैं। उपरोक्त साहित्य के साथ उनके पढनेमें मार्क्स-तत्त्वज्ञान और साम्यवादी साहित्य भी आया, जिसमें मानव-उन्नतिके करिश्मे बडी ही आकर्षक भाषामें वर्णित किये गये थे और आर्थिक विषमताका ढोल बजाकर हिंसक-आन्दोलन की पृष्ठभूमि तैयार की गई थी। यशवंतराव भी साम्यवादियोंके शाब्दिक-मोहजालसे मुक्त न रह सके। आर्थिक-विषमता के पाशमें फँसा हरकोई सोचे-समझने बिना साम्यवादी-जालमें अटक जाता है। प्रारंभमें यशवंतराव भी खुदको 'कॉमरेड' कहलवाने में गौरव अनुभव करते थे; लेकिन बाह्यरूप से आनेवाला साम्यवादी ज्वार, अनुभवके साथ कम होने लगा। "रशियन राज्य-क्रांति से निकला थोथा तत्वज्ञान, भारतमें उसी रूपमें कार्यान्वित करनेमें लाभसे अधिक हानि है और उसका सफल होना संभव भी नहीं है। समता जरूर चाहिए, समाजवाद हमारी भलाई करता है; लेकिन वह भारतीय वातावरण के अनुकूल होना चाहिए। उसमें भारतीयत्वकी भावना हो, भारतीय संस्कृतिका विशुद्ध स्वरूप हो। हमें ऐसे समाजवादकी गरज है" रह रहकर उनके मनमें लागने लगा। फलस्वरूप

कॉमरेड के बजाय साथी बननेमें उन्होंने अधिक बुद्धिमानी समझी। वह उनकी विद्यार्थी अवस्था थी। ज्ञानोपासना, साधना और नये दृष्टिकोणसे जगतको देखने की ख्वाहिश थी। बुद्धिमें परिपक्वता न थी। नये नये तत्वज्ञान और विचार-प्रणालियोंका वे नजदीक से अवलोकन कर रहे थे। राजनीतिमें आत्मीयता प्रस्थापित करने के लिए अथवा राजनैतिक-अध्ययनके लिए श्रद्धा का होना जरुरी है। वर्ना राजनीति जैसे शुष्क विषयको आत्मसात् करते हुए एडीका पसीना चोटीको आ जाता है। और अगर कोई माँका लाल कर भी लें तो उसे आशातीत सफलता हर्गिज नहीं मिलती। वैचारिक-शक्तिमें वृद्धि होनेके बजाय वह कुंठित हो जाती है। स्फूर्तिके बिना राजनीति निर्जीव है, ठीक उसी तरह राजनीतिमें अंधश्रद्धा भी पूर्णतया वर्जित है। इससे राजनैतिक विचारोंमें प्रगल्भता आनेके बजाय हमारा छीछला ज्ञान लोगोंकी मजाकका विषय बन जाता है। साथ ही राजनीतिमें प्रायोगिक ज्ञानकी भी अत्यंत आवश्यकता होती है। केवल पुस्तकोंके कीडे बननेसे काम नहीं चलता। बल्कि राजनीतिके मैदानमें उतरे हुए विरोधी दलोंकी तत्वप्रणाली और कार्य करने की पद्धतिका प्रत्यक्ष अनुभव लेना एक सफल राजनीतिज्ञ के लिए सबसे बडी डिग्री है। यशवंतराव के हिस्सेमें जो प्रारब्ध आया वह ऐसा कि राजनैतिक जीवनके प्रारम्भमें ही उन्हें वामपक्षी दलोंकी प्रतीति भली-भाँति हो गई प्रारंभिक संस्कार उनके मन पर अमिट बन गये और फलस्वरूप उन्हें एक स्थिर राजनैतिक दृष्टिकोण प्राप्त हुआ। अतः वे कभी किसी दलके कहर समर्थक न बने। पर देशकी आजादी के लिए अहर्निश आवाज बुलन्द करनेवाली राष्ट्रीय काँग्रेसके प्रति उनके हृदयमें अटूट श्रद्धा और भक्ति थी। अतः जब अवसर मिला तब काँग्रेसके पायिक बन कर प्रायः देशकी स्वतंत्रताके लिए कार्यरत बने रहे।

सन् १९४२ के काँग्रेस द्वारा संचालित "करो या मरो" (Do or die) के आन्दोलनका नेतृत्व स्वीकारकर यशवंतरावने ब्रिटिश सत्ता और देशी नौकर-शाहीको लोहेके चने चबवाये। उसमें उन्हें अपना बाह्य-पठन ही काम आया। विविध देशोंके स्वतंत्रता युद्धके सूक्ष्मातिसूक्ष्म तथ्य एकत्रित कर उन्होंने उनका प्रयोग कर भारतीय स्वातंत्र्य युद्ध के भू-गर्भ कार्यक्रमोंको यशस्वी बनाया था। विदेशी साहित्यसे प्राप्त "Guerrilla Warfare" आन्दोलन पद्धतिसे ही उन्होंने महाराष्ट्रमें देशी नौकरशाहीके दांत खट्टे किये थे।

सन् १९४६ के सार्वजनिक निर्वाचनके समय यशवंतराव बम्बई विधान सभा के लिए काँग्रेसी उम्मीदवारीके रूपमें खडे रहे और सफल बने। नये मंत्रीमंडलमें

उन्हें गृहविभाग का संसदीय मंत्री बनाया गया। उस समय उनके कंधों पर राज्य-प्रशासनकी कड़ी जिम्मेदारीके साथ ही साथ काँग्रेस दल संगठनका भी महत्वपूर्ण दायित्व था; जिसे उन्हें न्याय देना पडता था। फलस्वरूप उनका अधिक समय दौरेमें ही जाता था। काँग्रेस दल और प्रशासक काँग्रेस सरकारकी नीति और कार्योंका प्रचार एवं प्रसार महाराष्ट्रके कोने कोनेमें उन्हें करना पडता था। एक दृष्टिसे वे सरकार, काँग्रेस दल और सामान्य जनताको परस्पर जोडनेवाली कडीके समान थे। उन पर दुहरी जिम्मेदारी थी—काँग्रेस दलका संगठन और सरकारी काम-काज। इन सबके बावजूद भी उन्होंने अपना वाचन-व्यासंग नहीं छोडा। प्रति माह वे नियमित रूपसे नई पुस्तकें खरीदते और उनका अध्ययन-मनन करते रहते। महीनेमें कमसे कम एक पुस्तक खरीदना तो उनकी आदत-सी बन गई थी। संसदीय मंत्री बन जाने पर उन्होंने खास तौरसे अंग्रेजी साहित्य और राजनैतिक विषयोंका सखोल अभ्यास किया। अंग्रेजी साहित्यमें प्रकाशित अद्यतन नई पुस्तकें भी उनकी पैनी दृष्टिसे नही छूटीं। इस दरमियान उन्होंने राजनीतिके विविध ग्रन्थोंको उलट-पुलटकर विषयको आत्मसात् करनेका भरसक प्रयत्न किया। अत्यधिक कार्यव्यस्तताके बावजूद भी वे आधा-पौना घंटा जरूर पढते रहते थे। विशाल द्विभाषिकके मुख्य मंत्री बन जाने पर भी उनका पठनका चस्का न छूटा और आज उनकी निजी लायब्रेरीमें हजारोंकी संख्यामें उत्तमोत्तम ग्रंथ-राशि संग्रहित हैं।

ज्ञानोपासना बहुत हो गई। मैंने बहुत कुछ आत्मसात् कर लिया है। अब नये ज्ञानकी कोई जरूरत नहीं—ऐसी भावना यशवंतरावके मनमें कभी उदित न हुई। बल्कि मेरी ज्ञानसाधना अभी अधूरी है। मुझे खूब-खूब सीखना है। नये ज्ञानकी परिसीमाको गाँठना है—आदि विचार उनके मनमें हरदम उठते रहते हैं और जब कभी वे शान्तचित्त बैठे होते हैं तब प्रायः सोचा करते है, "क्यों न मैं गुरुदेव श्री रवीन्द्रनाथ ठाकूरके शान्तिनिकेतनकी तरह एकाध आश्रम निकाल कर स्नातक विद्यार्थी-वर्गको राजनीतिक, सामाजिक एवं तत्वज्ञानकी संजीवनी पिलाता रहूँ ?" वे वाचन करते हैं केवल ज्ञानार्जनके लिये नहीं बल्कि मनोरंजनके लिये भी। वे अपने प्रवचनोंमें प्रायः उत्कृष्ट उदाहरण देते हैं। तभी तो कई बार उनके भाषण साहित्यरससे परिलुप्त होते हैं। यशवंतरावमें बसे आद्य साहित्यकारके कारण ही महाराष्ट्रके विभिन्न दृष्टिकोणवाले साहित्यिक भी उनके मित्र एवं हितैषी हैं और उनका मराठी साहित्य जगतमें अच्छा-खासा सम्मान है। उसका उत्कृष्ट उदाहरण है विदर्भ साहित्य-सम्मेलनमें उनका उद्घाटकके

रूपमें आना। उस समय उन्होंने कहा: "केवल शब्द-लालित्यके ही पीछे न पडते हुए ज्ञानेश्वर, तिलक और आगरकरजीकी उज्ज्वल साहित्य परंपराको लक्ष्यमें लेकर, मराठी साहित्यकारोंको मानवतावादी साहित्य-सृजन करना चाहिए। अगर हम अपने मराठी साहित्यके पिछले सात-आठ सदियों पहलेके इतिहासको देखें-परखें तो पता लगेगा कि संत ज्ञानेश्वर जैसों की साहित्य-संपदा मानवतावादी रही हैं—उन्होंने जो उडान भारी उसकी बराबरी आज तक कोई कर नहीं सका है। संत-साहित्य मराठी भाषाकी अमूल्य निधि है। और इसी साहित्यिक-विचार धाराके दर्शन हमें लोकमान्य तिलक, न्यायमूर्ति रानडेके साहित्यमें होते हैं। शब्दोंमें लालित्य हो, लेकिन लालित्यके साथ ही मानवतावादी प्रेरणा होना भी अत्यावश्यक है। समाजको प्रगतिके पथपर ले जानेकी शक्ति साहित्यमें होनी चाहिए और ऐसी शक्ति तथा मानवतावादी दृष्टिकोण जिस साहित्यमें नहीं वह साहित्य नहीं बल्कि कुछ और ही है.....। शब्दकी शक्ति और सामर्थ्य अतुलनीय है। उसमें अणुबम और उदजन बमसे भी करारी शक्ति है। आजके विश्वके कदम एक ओर जहाँ प्रगति और उन्नतिके शिखरकी ओर बढ रहे हैं —वहाँ दूसरी ओर विनिपातकी ओर भी अग्रसर हो रहे हैं। जहाँ राजनैतिक नेता विश्वके कदम प्रगति, सुख और शांति की ओर बढानेमें असमर्थ सिद्ध होंगे वहाँ साहित्यकार अपनी भाषा और वाणीके बल पर विश्वको परम मांगल्य, जनकल्याण, आबादी और आमदनीकी ओर ले जानेमें सफल सिद्ध होंगे। साहित्यकारको किसी एक भाषा या राज्यकी मर्यादामें न रह कर सदैव संचार करते रहना चाहिए। उन्हें नवमानवतावादी, सुख और शांतिका प्रेरक, परम मांगल्य और जनकल्याणकारी, बहुजनहिताय–बहुजनसुखाय-साहित्यकी निर्मितिमें अपने आपको लगा देना चाहिए।"

यशवंतरावका उपरोक्त उद्घाटन-भाषण पढकर उनके अभिन्न हृदय मित्र तर्कतीर्थ श्री लक्ष्मणशास्त्री जोशीने महाराष्ट्रका एक महान् वैचारिक नेता और साहित्यसेवक के गौरवोद्गारसे उनकी प्रशंसा की थी। यशवंतरावके व्यक्तित्वका साहित्य-सेवा यह एक विलोभनीय पहलू है। कला और जीवनके प्रश्नको लेकर मराठीके साहित्यकारोंमें पिछले कितने ही समयसे विभिन्न विचार-प्रवाह प्रचलित हैं। कलाके लिए कला प्रतिपादित करनेवाले लेखक-वर्गको ध्येय, मानवतावाद जैसी शब्द-रचना मान्य नहीं; मूल उद्देश्यको प्राधान्य देनेवाले साहित्यकी गणना ललित साहित्यमें नहीं होती और समयके साथ वह नष्ट हो जाती है। जिसके प्रत्युत्तरमें प्रायः यशवंतराव कहते रहते हैं: "ललित साहित्य या और किसी

प्रकारका साहित्य लें तो भी उसका महत्व उसमें व्यक्त विचार और उससे होनेवाले परिणाम पर अवलंबित रहता है। शेक्सपीयर, शरत्चंद्र, शेली, मुंशी प्रेमचंद, हेमचंद्राचार्य, गडकरी आदि महान् साहित्यकार भी उसमें व्यक्त विचारधाराके कारण ही सर्वश्रुत और सर्वविदित हैं।"

सन १९५२ में पूनाकी 'वसंत व्याख्यान माला' का उद्घाटन करते समय यशवंतरावने 'हिन्दी जनतन्त्रका भविष्य' विषय लेकर जो उद्घाटन-प्रवचन किया वह उनमें रहे साहित्यिक पहलूका एक उत्कृष्ट नमूना है। राजनैतिक व्यास-पीठ परसे होनेवाले उनके भाषण केवल शुष्क राजकीय पुराण या निरी बकवास 'थोथा चना बाजे घना' नहीं होते बल्कि उसमें भी साहित्य-रस, मानवतावादी दृष्टिकोण, अनुभूति और आकांक्षाओंका प्रतिबिंब होता हैं। उन्होंने अपने भाषण में मनुष्यों की सृजन-शक्तिको आव्हान देते हुए बताया था कि जनता-जनार्दनकी कार्यप्रवणता पर ही हिन्दी जनतंत्रका भविष्य सर्वस्वी निर्भर है। उन्होंने कहा: "जहाँसे विविध मार्ग फूट रहे हैं ऐसे चोराहेपर आज विश्व खडा है और किस मार्गसे जानेपर अभ्युदय होगा इस संभ्रममें पडा हुआ है। ऐसे संभ्रम-कालमें जनतंत्रका एक महान् प्रयोग हम कर रहे हैं। हमारी सिद्धि-असिद्धि पर ही विश्व-जनतंत्रका भविष्य अवलंबित है। आंतर-बाह्य शत्रुओंसे देशका संरक्षण ही जनतंत्रका आशय नहीं बल्कि जनहितकारी राज्यको निर्मिति कैसे हों—यह भी एक प्रश्न है। स्वतंत्र हो जाने पर भी देशके सामने कितनी ही ऐसी समस्याएँ हैं, जो अभी तक हल नहीं हुई हैं! तो क्या उन्हें हल करनेके लिए चीन-रूसका मार्ग अपनाना चाहिए? या पिछले ६०-७० सालसे दादाभाई नवरोजीसे लेकर प्रधानमंत्री नेहरूजी तक हमारे महान् नेता-ओंने जनतंत्रकी जो एक महान परिभाषा और परंपरा दी है—उसके जरिये हल करनी चाहिए। हमारे सामने यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है—जिसके प्रत्युत्तर पर ही हिन्दी जनतंत्र-प्रणाली उत्तम है या अशुभ इसका निर्णय हो सकेगा। फ्रेंच राज्य-क्रांतिसे जनतंत्रकी कल्पनाका उद्गम हुआ लेकिन आज वहाँ जनतंत्रकी भावना परसे लोगोंका विश्वास उडने लगा है। ऐसे संधि-कालमें हिन्दी-जनतंत्र प्रणालीका उदय हुआ है। जनतंत्रके बारेमें हमारे महान् नेताओंकी विचार-धारा एक-दूसरेसे किंचित् भिन्न भी हो सकती है पर आजके भारतीय जनतंत्रमें दादाभाई नवरोजी न्यायमूर्ति रानडे, लोकमान्य तिलक, राष्ट्रपिता पूज्य बापू एवं प्रधानमंत्री नेहरूजीकी विचार-धाराका ही प्रतिबिंब झलकता है। विरोधी नेता प्रायः यह कहते सुने गये हैं कि हमारे प्रधानमंत्री नेहरूका चाँग-के-शेक होते देर

न लगेगी। लेकिन इससे कोई समस्या हल नहीं हो जाती। अगर पंडित नेहरूका चँग कै-शैक हो जाएगा तो भारतीय जनता और भारतको जो बडी-भारी कीमत चुकानी पडेगी—इसका शायद किसीने विचार तक नहीं किया है।

"गरीब जनताके मनमें नई आशा, उमंगें और महत्वाकांक्षाओंका बीजारोपण कर कार्य-प्रवण बनानेके बजाय अगर उसमें असंतोष की आग ही भडकाते रहे तो रातमें उनके हाथ धनिकोंकी तिजोरी पर ही पडेंगे। इससे समस्या हल हो जाएगी? धन, देशके मुडीवादी या सरकारकी तिजोरीमें बंद न हो, आकाशमें क्रीडा करते बादलोंमें हैं, बादलके गर्जन-वर्जनके साथ गिरती जलधारामें है, जलधारासे बनी नदीके प्रवाहमें है, नदीके दोनों कूलोंके तर हो जानेसे उर्वरा बनती काली मिट्टीमें है, जमीनकी खनिज संपत्तिमें है, खनिज संपत्तिसे बनती वैज्ञानिक यंत्र-सामग्रीमें है, लहराते खेल-खलिहानोंमें हैं और इन सबको अपनी मुट्ठीमें बंद करनेवाले अजेय मानवमें है। अगर कोई इस बातकी प्रतीति जनता-जनार्दनको करा, उनमें नवचैतन्य निर्माणकर कार्य-प्रवण बना दें तो हमारी सारी समस्याएँ चुटकीमें हल हो जाएँगी। और समस्याओंके हल होनेमें ही हिन्दी जनतंत्र-प्रणालीका भविष्य अवलम्बित है।"

यशवंतरावने पैसा या संपत्ति पैदा करने—प्राप्त करने की रीत बताते हुए जो भव्य शब्द-योजनाकी। उस शब्द-रचनाके ताल पर भला किस भारतीयका मन डोल नहीं उठेगा? उक्त शब्द-रचनासे संपत्तिकी सच्ची परिभाषा सुन कर कौन आनन्दसे झूम न उठेगा? यशवंतरावके साहित्यकी थाती उनकी इस वेगवती और वैचारिक वाणीमें ही है।

यशवंतराव राजनैतिक तत्वज्ञानका अध्ययन-मनन करनेके लिए वाङ्मय-पठन करते हैं, ललित-साहित्यका आनन्दोपभोग उठानेके लिए वाचन करते हैं और राज्य-प्रशासन चलानेके लिए आवश्यक जानकारी प्राप्त करने के लिए वाचन करते हैं। जब वे गृह-विभागके संसदीय मंत्री थे तब उन्होंने यूरोप और एशियाकी विभिन्न राज्य-प्रशासन पद्धतियोंका सखोल अभ्यास किया था। स्वायत्त शासन मन्त्री बने तब उन्होंने अमरीका युरोपकी स्वायत्त शासन संस्थाओंसे संबंधित विविध विषयोंका अभ्यास किया था। जब पूर्ति और वनमन्त्री थे तब अपने विभागसे सम्बंधित ग्रन्थ, विवरण और लेखमालाओंका अभ्यास किया था। और राज्यके मुख्य मंत्री बन जाने पर राज्य प्रशासनके सर्व सामान्य स्वरूपकी जानकारी प्राप्तकर राज्यकी सर्वतोमुखी उन्नति करने हेतु हर पहलूका सूक्ष्माध्ययन किया है और करते रहते हैं। वैसे देखा जाय तो यशवंतराव

एक प्रशासन-पटु, अद्‌भुत प्रतिभाशाली, कुशल राज्यकर्ता और अध्ययनशील राजनीतिज्ञ (scholar statesman) हैं।

स्थानीय परिस्थितिका अचूक अन्दाजा लगाना, योग्य व्यक्तियोंका चुनाव, किसका कितना और कैसा उपयोग करना आदिका निश्चित अंदाज बाँधना, निस्पृह-वृत्ति, कार्यके प्रति लगन, दृढ आत्मबल और उत्तरदायित्वका ज्ञान, आदि विविध गुण ही यशवंतरावकी आजकी पदोन्नति—उनको प्राप्त विशिष्ट स्थानकी कुंजी है। उनके विषयमें यह कहा जाय तो अतिशयोक्ति न होगी: "अपने ध्येयकी पूर्तिके लिए आवश्यक लगन और धीरज दोनोंका उनमें अद्‌भुत समावेश हैं और इसीके परिणामस्वरूप संकटापन्न स्थितिमें भी योग्य मार्गदर्शन का अवलम्बनकर वे प्रगति, वैभव, यशके शिखर पर विराजमान हैं।"

एक बार किसी पंडित मित्रने यशवंतरावसे प्रश्न किया, "यशवंतराव! आपकी कुशाग्र बुद्धिका चोटीके विद्वानों पर सिक्का जम गया हैं। फिर भी उनके मनमें आपके प्रति तनिक भी प्रेमकी भावना नहीं है?" मित्रके प्रश्नके पीछे किसीके प्रति द्वेष या दोषकी भावना न थी। सीधा-सादा था प्रश्न उसका। उसकी दृढ मान्यता थी कि राजनीतिमें यशवंतरावका नेतृत्व बुद्धिप्रामाण्य की कसौटी पर कसकर यशस्वी होनेवाला है और ऐसे यशस्वी नेतृत्वके पीछे बुद्धिवादी मध्यम-वर्ग खडा न रहा तो यशवंतरावको सफल होनेमें जरा तकलीफ होगी साथ ही बुद्धिवादी वर्गको नुकसान! लेकिन यशवंतरावका प्रत्युत्तर एकदम स्पष्ट और सरल था: "विद्वत् वर्गको प्रायः ऐसा लगता है कि दूसरोंको उनके चरणमें बैठकर आशीर्वाद लेना चाहिए। लेकिन मैंने अपने जीवनमें यों आशीर्वाद लेना कभी सीखा नहीं है। किसीके बारेमें मैं कभी पूर्वग्रहदूषित मत नहीं बनाता और कभी मेरी गलती हो जाय तो परस्पर विचार विनिमयकर मैं उसे सुधार लेता हूँ। मेरे संदेशके रूपमें ही सही उनसे कहें कि मैं किसीके चरणोंमें बैठकर आशीर्वाद लेनेका आदी नहीं लेकिन एक बैठकमें बैठ, खुले हृदय किसी भी विषय पर चर्चा करनेके लिए सदैव तैयार हूँ।" ये शब्द उस समयके हैं जब वे राज्यके मुख्य मंत्री भी नहीं थे। लेकिन कितने सूचक और मार्मिक हैं—इसका अन्दाज तो पाठक स्वयं ही लगा सकता है।

यशवंतरावके गुण-गौरवकी बातें जब कभी होती हैं, लोग उनका अभिनंदन करते हैं, उनकी कर्तव्यदक्षता और कार्यकुशलताके गुण गाते हैं। उनमें ध्येयनिष्ठा, समन्वयशक्ति, संतुलन बुद्धि, विवेकी दृष्टि और निश्चय भावनाकी प्रशंसा करते नहीं अघाते और उनके प्रगति तथा उन्नतिका रहस्य जाननेकी कोशिश करते हैं।

तब वे प्रायः अपने मित्रमंडलमें गद्‌गद् हो, कहते सुने गये हैं कि महात्मा फुले और छत्रपति शाहू महाराज मेरे जीवन-चक्रकी धुरी हैं। उन्हीं की बदौलत मैं जो कुछ आज हूँ बन सका। मैंने उनसे ही कार्य करनेकी शक्ति और प्रेरणा ग्रहण की है। अगर वे नहीं होते तो मैं किसी रँहट पर बैलोंके पीछे होता या किसी कल-कारखानेमें मशीनसे सिरपच्ची करता दिखाई देता। ठीक वैसे ही प्रशासनिक प्राविण्य प्राप्त करनेके पीछे भारतके वित्तमंत्री और तत्कालीन बम्बई राज्यीय मंत्रीमंडलके वरिष्ठ सदस्य श्री मोरारजीभाईका योग्य मार्गदर्शन ही काम आया है।

यशवंतरावका इतिहासकी ओर देखनेका दृष्टिकोण भी अलग है। वे ऐतिहासिक घटनाओंका विहंगावलोकन करते हुए उनमें रहे तथ्योंसे स्फूर्ति और मार्गदर्शन प्राप्त करते हैं। इतिहासको वे मरे मुर्दे उखाडना या केवल पुनरावृत्तिके थोथे हिसाबके रूपमें नहीं लेते बल्कि इतिहासको अपना परम सहयोगी मानते हैं। इतिहास कल घटा था, आज घट रहा है और कल घटित होगा—ऐसी उनकी उत्क्रान्तिकारी अटल अचल श्रद्धा है। परिणामस्वरूप ऐतिहासिक तथ्योंको मद्दे नजर रख कर नया इतिहास निर्माण करनेका महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व हमारे कंधों पर हैं और हमें उसे स्वीकारकर योग्य न्याय देना चाहिए ऐसी महत्वाकांक्षा और आत्मविश्वास उनमें कूट-कूट कर भरा पडा है। इसीलिये मुश्किलसे मुश्किल कार्यकी जिम्मेदारी वे हँसते हँसते उठाते हैं और उसे आनन-फाननमें सफलकर दिखाते हैं।

६ : सातारा का संघर्ष

हमारा भारत देश सात लाख छोटे-मोटे गाँवों में बिखरा पडा है। कालांतर से विदेशी आक्रमण के कारण शहरों के गाँव बन गये तथा गाँवों की राख! ऐसे भारत का बहुजन समाज अर्थात् किसान और मजदूर, जिसे दो जून खाना तक नशीब नहीं होता। जो खूनका पसीना कर मार मार मेहनत करता है और बदलेमें पाता है साहूकार, पटवारी और कारिंदों की गालियाँ, बेठ और बेगार उसे अपने बालबच्चों का पेट भरने से ही अवकाश कहाँ कि सत्ता का साझीदार बन सके।

महाराष्ट्र के कृषक और मजदूर समाज में भी ऐसा वर्ग विद्यमान था, जिसकी जडें महाराष्ट्र के प्रत्येक गाँव में फैली हुई थीं। वह अपने पुराने ऐश्वर्य और जहोजलाली के बल पर जनतंत्र में सिक्का जमाना चाहता था। अतः जब तक काँग्रेस की प्रवृत्तियाँ रचनात्मक कार्य की ओर थी तब तक वह काँग्रेस के प्रति बिलकुल उदासीन था। लेकिन जब उसने देखा कि अब तो काँग्रेस के हाथ में शासन-सत्ता की बागडोर आनेवाली है तब वह एडी का पसीना चोटी तक लाकर संगठित रूप से काग्रेस पर अपना नियंत्रण प्रस्थापित करने में लग गया और जहाँ उसे अपने कार्य में असफलता मिली वहाँ वह काँग्रेस का विरोध करने के लिए नाना रूप धारण कर कमर कस कर खडा हो गया।

यशवंतराव की दूरदर्शी दृष्टि और पैनी बुद्धिने इस गुटकी योजना को भली-भाँति समय लिया और अपनी बाँकी कुटनीति से कभी उनसे सहयोग किया तो कभी उनसे दो-दो हाथ भी किये। लेकिन अपनी ध्येय-प्राप्ति से एक कदम भी पीछे न हटे और उन्होंने एक विशुद्ध नेतृत्व-शक्ति संगठित की। सातारा जिले को पुरोगामी दृष्टिकोण और शक्तिशाली बनाते हुए यशवंतरावने भूल कर भी कभी सत्ता-स्थान ग्रहण करने का मोह न बताया। बल्कि सत्ता से वे सदैव अलिप्त ही रहे। यशवंतरावने शैशव से ही स्वाधीनता-आन्दोलन से सम्बन्ध जोड रखे थे। उन्होंने बडे-बडे नेताओं को नजदीक से देखा था और उनके विभिन्न विचार-प्रवाहों को मथन कर आत्मसात् किया था। अतः राजनीति की बारीकियाँ और जनतंत्रीय जीवन तथा उसके तत्वज्ञान को अच्छी तरह जान लिया था। फलतः दैनंदिन राजनीति के प्रवाह, सामाजिक परिस्थिति और उससे जन-समाज पर होनेवाले परिणाम का आकलन कर, परस्पर विरोधी नेतृत्व में से ही जनतंत्रीय विचार-धारा का प्रचारक, प्रखर संदेशवाहक युगवीर पैदा करना था। यह सब होने पर भी उनका कार्यक्षेत्र अभी सीमित था। वे सातारा जिले में ही अभी उत्साही कार्यकर्ता के रूपमें प्रसिद्ध थे।

सातारा जिले का सन् १९३७ का समय यानी कूपरशाही की सर्वतोमुखी प्रगति का काल था। सातारा जिलेकी कूपरशाही, मुट्ठी भर सत्तालोलुप धनिक वर्ग का ही दूसरा स्वरूप था। इसके नेता थे सातारा जिले के उस समय के प्रसिद्ध कारखानदार सर धनजीशाह कूपर। सातारा रोड पर उनका अपना जंगी लोहे और इस्पात का कारखाना था। सारे जिले की शराब की ठेकेदारी श्री कूपर के पास ही थी। अतुल संपत्ति, बड़ा व्यापार और सरकार-दरबार में भारी प्रतिष्ठा आदि विपुल साधनों से संपन्न सर कूपर एक बुद्धिमान

और महत्वाकांक्षी सज्जन थे। उन्होंने स्थानीय परिस्थिति का अचूक निदान निकालकर बड़ी खूबी से सातारा जिले की राजनीतिक-प्रवृत्तियों का सूत्र-संचालन अपने हाथ में रखा था। उस समय जिले की राजकीय सत्ता का सर्वोच्च केन्द्रबिन्दु यानी लोकल बोर्ड का अध्यक्षपद! श्री कुपर स्वयं सातारा लोकल बोर्ड के अध्यक्ष बनने का सम्मान प्राप्त कर चुके थे और अब प्रादेशिक राजनीति में दिलचस्पी लेने लगे थे। उन्होंने कराड तहसील के एक प्रतिष्ठित व्यापारी रावसाहब कल्याणी को जिला-बोर्ड का अध्यक्ष बनाकर जिले का सूत्र-संचालन अपने हाथ में ले रखा था। सन् १९३७ में श्री कूपर ने बम्बई राज्य के अस्थायी मंत्रीमंडलका नेतृत्व भी किया था। इस पर से उनकी प्रचंड शक्ति और कार्यदक्षता का पता अच्छी तरह लग सकता है। ऐसी प्रचंड शक्ति से यशवंतराव को लोहा लेना था।

जिस तरह काँग्रेसके बाहर ऐसा वर्ग मौजुद था उसी तरह काँग्रेसान्तर्गत भी ऐसा एक गुट था, जो यशवंतराव का विरोधी था। यशवंतरावने भी अपनी विचार-धाराके समर्थक और समाजवादी दृष्टिकोण को जनहित का अंतिम ध्येय माननेवाले युवक कार्यकर्ताओं का एक गुट तैयार किया था। उसके अगुआ थे श्री आत्माराम पाटील। 'सीधे-साधे किसान और मजदूर-वर्ग के प्रतिनिधि को विधान सभा का टिकिट मिलना चाहिए' इस निर्धार के साथ यशवंतराव और उनके साथियोंने श्री आत्माराम पाटील का नाम निश्चित किया। काफी वाद-विवाद के पश्चात् यशवंतराव की बात मानली गई। पर गरीब बिचारा किसान काँग्रेस उम्मिदवार बन जाने पर भी धनाभाव में चुनाव-खर्च कहाँ से लाता? कार्यकर्ताओं की निराशा का पारावार न रहा। फिर भी यशवंतरावने हिम्मत न हारी। सातारा जिले के छोटे-बडे सभी गाँवोंका कार्यकर्ताओं ने कंधे पर तिरंगा निशान उठाये, काँग्रेस का संदेश घर-घर पहुँचाते दौरा किया। इन सारी प्रवृत्तियों के पीछे यशवंतराव का सुदृढ मार्गदर्शन काम कर रहा था। उस समय उन्होंने 'लोक क्रांति' नामक एक साप्ताहिक भी बडे घडल्लेसे चलाया था जिसका सारा काम वे खुद ही देखते थे। काँग्रेस के धनिक-वर्ग की उन्हें रत्ती भी सहानुभूति न मिली। पर वे निराश न हुए। एक घटना तो ऐसी घटित हुई जिससे उन्हें सख्त आघात पहुँचा। लेकिन अपने कार्यसे जरा भी विचलित न हुए और अथक प्रयत्न कर श्री आत्माराम पाटील को विजयी बनाया।

घटना ऐसी थी कि चुनाव के ऐन दो दिन पूर्व पंडित जवाहरलाल नेहरूका एक सार्वजनिक भाषण कराडके स्वामी-बागमें रखा गया था। काँग्रेसी उम्मिद-

वारके समर्थकोंने पंडितजीके आगमनका संदेश सातारा जिलेके एक छोरसे दूसरे छोर तक प्रचार भाषणोंके साथ पहुँचा दिया था। अतः भाषण सुनने जनता बहुत बडी संख्यामें आनेवाली थी। कराड सभाके एक दिन पूर्व पंडितजीका व्याख्यान निपाणीमें था। वहाँसे वे सुबह चार बजे आनेवाले थे। उनकी अगवानीके लिये देशभक्त दादासाहब आलतेकर निजी कारसे निपाणी जानेवाले थे। काँग्रेस उम्मिदवार श्री शिरालकरकी अपनी कार थी। पर ऐन मौके पर उन्होंने बहानाबाजी कर कार देनेसे इन्कार कर दिया। यह बात सुन कर यशवंतरावके पैरों तलेसे जमीन ही खिसक गई। पंडितजीके तामसी स्वभावसे वे भला कहाँ परिचित न थे। अब क्या किया जाय यही एक जटिल समस्या थी सबके सामने। कराडमें उन दिनों दो कार थी—एक खुद रावसाहब कल्याणी की और दूसरी हाजी कासमभाई कच्छी की। उसमें भी रावसाहेब कल्याणी बम्बई विधान सभा के लिए स्वयं उम्मिदवार थे और श्री कच्छी उनके कट्टर समर्थक!

आखिरकर कोई चारा न देखकर यशवंतराव दादासाहब आलतेकर को साथ ले श्री कच्छी के यहाँ गये। काँग्रेस विरोधी प्रचारक से काँग्रेस-प्रचार के लिए वाहन मांगना बिलकुल अनुचित था। लेकिन पंडितजी जैसे अखिल भारतीय कीर्ति के नेता के कार्यक्रमों को सरल बनाने के लिए हर प्रकार का अपमान सहन करने की तैयारी यशवंतरावने मन ही मन कर रखी थी। उन्होंने श्री कच्छी से कार की मांग की। उनका हृदय तरह-तरह की शंकाकुशंकाओं से धडक रहा था। किंतु श्री कच्छी ने एक पल की भी देर किये बिना अपने ड्रायवर को बुलाया और उसे मार्ग में आवश्यक खर्च के लिए पचास रुपये देकर कार श्री आलतेकरजी को दी। उन्होंने कार देते समय यह तक नहीं सोचा कि मैं रावसाहब कल्याणी का प्रचारक हूँ; और उन्ही के विरोधी प्रचारकों को कार कैसे दूँ; बल्कि उन्होंने यशवंतराव के पास अपनी हार्दिक वेदना प्रकट करते हुए उलटा कहा: "पंडित नेहरू मेरी कार में आयेंगे यह सूचना अगर आप मुझे बारह घंटे पूर्व देते तो मैं एकदम नई कार लाकर आपके हवाले कर देता। पंडितजी मेरी कार में आयेंगे सचमुच यह मेरा अहोभाग्य ही है।" ये उद्‌गार काँग्रेस विरोधक और उस समय के रावसाहब के हैं। इस पर से ही सिद्ध होता है कि बाह्य रूप से धनिक-वर्ग भले ही सरकार के साथ हो, पर उनके मनमें भी राष्ट्रीय नेता और उनके कार्यों के लिए अगाध प्रेम और श्रद्धा थी।

धार्मिक कट्टरता भी प्रतिष्ठामूलक समस्याओं में से ही जन्म लेती है। उसमें सनातन दृष्टिकोण होता है, हृदय की विशालता और उदारता का पता नहीं होता। और इसीमें से विविध उलझनें पैदा होती हैं, जिनका हल होना प्रायः असंभव हो जाता है। यशवंतराव इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि जनतंत्र की दृढता उसके प्रचारकों में सांप्रदायिक-दृष्टिकोण के अभाव में ही समाई हुई है। प्रशासक वर्ग विभिन्न सांप्रदायिक दृष्टिकोणों से अपने को जितना अलग रखेगा उतने ही जोर शोर से वह जनतंत्र की भावना का प्रचार, प्रसार और बीजारोपण जनता-जनार्दन के हृदय में आसानी से कर सकेगा। पिछले कई वर्षों से कराड के कृष्णाबाई घाट पर से मुसलमानों के ताजियें निकलते थे। हालाँकि ताजियें ले जाने के लिए दूसरा मार्ग भी था। लेकिन वंशपरंपरागत से यही सिरस्ता चला आ रहा था। इस बात को लेकर हिन्दू-मुस्लिमों में आये दिन तू-तू-मैं-मैं होने लगी। आखिर प्रश्न दीवानी कोर्ट में गया। दोनों संप्रदायों में से एक संप्रदाय भी अपनी हठ छोडने के लिए तैयार न था। यशवंतराव को यह बात नहीं भाई। उनके विचार में "कोर्ट का जो फैसला होगा उसे तो प्रत्येक संप्रदाय को झख मार कर मानना पडेगा। पर इससे दोनों संप्रदाय में फूट की जो गहरी खाई तैयार हो जाएगी वह कभी पाटे भी न पट सकेगी। और यह भावना हमेशा के लिए जनतंत्र की मारक सिद्ध होगी।" अतः वे दोनों संप्रदायों में परस्पर समझौता करवाने में लगे हुए थे। पेशी के दिन प्रायः वे अपने मित्र श्री ताहेर इनामदार के साथ बाहर बैठ कर मुस्लिम भाइयों को समझाने का प्रयत्न करते रहते थे।

यशवंतराव का मित्रप्रेम भी उत्कट दर्जेका है। एक बार जिससे उनकी मित्रता हो गई फिर आजीवन कभी तोडेंगे नहीं। भले ही फिर भयंकर से भयंकर संकटों का सामना क्यों न करना पडे। उनके मित्र उनसे रूठ जायेंगे, नाराज होंगे, झगड लेंगे। लेकिन इनकी मित्रता तोड कर कभी नहीं जायेंगे और एकाध जाना भी चाहेगा तो यशवंतराव उसे जाने नहीं देंगे। उनका मित्र-परिवार बहुत बडा है। कारण उनमें अपने मित्र को परखने की अद्‌भुत कला है।

मित्र वही है जो मित्र के सुख और दुःख में काम आये। उसके दुःख को अपना दुःख माने और उसके सुख को अपना सुख। मित्र बनाया नहीं जाता हो जाता है। मित्रता के लिए जात पाँत, रीति-रिवाज, धर्म-कर्म या रहन-सहन का बंधन नहीं होता। मित्रता अजरामर होती है। हो सकता है कि किन्ही कारणवश परस्पर दोनों मित्रों में मतभेद होगये हों पर मतभेद नहीं होने चाहिए।

मित्र गलती कर जायँ, राह भटक जायँ तो दूसरे मित्र का कर्तव्य है उसे सही रास्ते लाने का।

राजनीतिक क्षेत्र में उनके ऐसे भी साथी हैं, जो कभी इनके लंगोटिये यार रहे होंगे। लेकिन वे केवल राजनीतिक कारणों से कभी किसी को मित्र नहीं बनाते। और तभी तो उन्होंने अपने मित्रों के बल और सहयोग से बड़ी-बड़ी मंझिलें तय की हैं। हमने प्रायः देखा कि एक बार मित्रों में मतभेद हो जाते ही वे एक-दूसरे के जान के ग्राहक बन जाते हैं। एक समय के अपने अभिन्न हृदय मित्र की निंदा करते नहीं अघाते। लेकिन यशवंतराव के बारे में ऐसा बिल्कुल नहीं है। और इसी कारणवश उनके कई मित्र आज विरोधी शिबिर में होते हुए भी सही अर्थ में मित्र हैं और विरोधी शिबिर के कितने ही लोग उनके मित्र बन गये हैं। यशवंतरावने अपनी मित्रता को भूल कर भी कभी राजनीतिक क्षेत्र में आडे नहीं आने दी। जिसे जो बात नहीं बतानी है वे उसे स्पष्ट कह देंगे। पर उसे फँसाने की बात कभी नहीं करेंगे। श्री गौरिहर सिंहासने, श्री दयार्णव कोपर्डेकर, श्री राघुअण्णा लिमये, श्री आत्माराम जाधव, श्री हरिभाऊ लाड एवं श्री शांताराम देसाई यशवंतराव के घनिष्ट मित्रों में से हैं, जो समय-बेसमय अपने मित्र के लिए एक पैर खडे दृष्टिगोचर होते हैं। ठीक वैसे ही राजनीतिकक्षेत्र में श्री यशवंतराव पालेकर, श्री किसन वीर, तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री जोशी, श्री वसंतराव पाटील, श्री धुलप्पा नवले, श्री वसंतराव बाईक, श्री दत्ता देशमुख, लोकसत्ता के संपादक ह. रा. महाजनी, साथी एस. एम. जोशी, भाई छन्नुसिंग चन्देले आदि मित्र हैं। ये सब इनके सुख दुःख के साथी रहे हैं।

मित्र-प्रेम के कारण यशवंतरावको काफी सहन भी करना पडा है। विरोधियों द्वारा किये गये आक्षेपों के कारण वे सार्वजनिक जीवन से सदा के लिए उठ जाते हैं या क्या? इस बात की चिंता इनके घनिष्ट मित्रों में सदा बनी रही है। पर यशवंतरावने कभी किसी बात की परवाह न की। इनके कॉलेज-जीवन के एक अभिन्न हृदय मित्र श्री के. डी. पाटील! उन पर सन् १९४७ में वालवे तहसील और आस-पास के प्रदेश के व्यक्ति-द्वेष्टा लोगोंने बम्बई राज्य के भूतपूर्व विधायक श्री चंदु पाटील ऊर्फ कारभारी के खून का आक्षेप लगा कर उनके विरुद्ध आकाश-पाताल एक कर दिया। विरोधी इतना करने पर भी शांत न रहे बल्कि उन्होंने इस प्रकरण में यशवंतराव को भी घसीट लिया। यों देखा जाय तो कारभारी के प्रति इनके हृदय में आदर और स्नेह की भावना थी। श्री कारभारी

भी के. डी. पाटील को अपने बेटे से भी ज्यादा चाहते थे। ऐसे बुजुर्ग का कभी खून हो सकता है ? और वह भी उन लोगों के हाथों, जिन्हें श्री कारभारीने अपने स्नेह, अनुभव और ममता से आगे बढाया हो ? लेकिन भाई-भाईके झगडे ने और परस्पर-विरोधी भावनाओंने कारभारीके खून को महत्व दे, उन्हीं के संगी-साथियों को बदनाम कर सार्वजनिक-जीवन से सदा के लिए उठाने का बीडा उठाया था। के. डी. पाटील उसी गाँव के उत्साही कार्यकर्ता और युवक विधायक थे। साथ ही प्रतिष्ठित वकील। कायदे-कानुन का जानकार एक सफल वकील भला कभी अपने बुजुर्ग को खत्म कर सकता है ? लेकिन इस बातको सोचता कौन ? विरोध का बवण्डर जो उठ खडा हुआ था। अपने विरुद्ध होनेवाले गन्दे प्रचार और जलील हरकतों से श्री के. डी. पाटील को सख्त आघात पहूँचा था। उन्होंने अपनी आंतरिक वेदना एक मित्र के नाते यशवंतरावके सामने साश्रु प्रकट की थी। इस प्रकरण को जोर शोर से बढावा देनेवाले विरोधी-शिबिर में विरोधी-दलोंके लोगों के अलावा उनके अपने दलके काँग्रेसजन भी थे। वालवे तहसील के इस जहरीले प्रचारने आखिर एक युवक विधायक और जिलेके उत्साही कार्यकर्ता श्री के. डी. पाटीलका बलि लेकर ही पीछा छोडा।

श्री के. डी. पाटीलके अमानुष खूनसे यशवंतरावके हृदयको जबरदस्त धक्का पहुँचा। उन्हें ऐसा लगा जैसे उन पर आपत्तियों का पहाड ही टूट पडा हो। कई दिनों तक वे मित्र विरहकी वेदनामें व्यथित होते रहे। लेकिन उन्होंने अपनी कर्तव्य-बुद्धिको कभी नहीं छोडा या किसीके बहकावेमें आकर श्री पाटीलके खूनके लिए जिम्मेदार वर्गसे बदलेकी भावना न रखी। जो कुछ भी यातनाएँ पडी खुद ही चुपचाप सहते रहे। वे भली-भाँति जानते थे कि श्री पाटीलके खूनके पीछे दूसरे लोगोंके साथ एक काँग्रेस कार्यकर्ता का भी हाथ है। फलतः उस पर यशवंतरावका गुस्सा होना स्वाभाविकही था। लेकिन एक समय ऐसा भी आया जब यशवंतरावको शिवजी की तरह दलनिष्ठा और देशकी भलाई के लिए हलाहल जहर पीना पडा। जब बहुजन समाज की आड लेकर श्री जेधे-मोरे जैसे महाराष्ट्र के चोटी के काँग्रेसी नेता काँग्रेस का परित्याग कर विरोधी-शिबिर में जा बैठे। तब सारे महाराष्ट्र में काँग्रेस-विरोधी आग धू-धू कर जलने लगी थी। महाराष्ट्र काँग्रेस में जगह-जगह दरार पड रही थी। इस संक्रमण काल में काँग्रेस संस्था को अगर महाराष्ट्र में बनाये रखना है तो स्वार्थत्याग, परस्पर विरोधी भावना और आपसी मतभेदों को तिलाञ्जलि देना प्रत्येक काँग्रेसी का आद्य कर्तव्य था। इस कसौटी में से भी यशवंतराव पार

उतरे। उन्होंने दक्षिण सातारा जिले में काँग्रेस को जिन्दा रखने के लिए अपने परम मित्र श्री के. डी. पाटील के खून के लिए जिम्मेदार काँग्रेसी कार्यकर्ता को सक्रिय साथ देकर अपनी दलनिष्ठा का अपूर्व उदाहरण दिया।

सन् १९३८ से ५० तक यशवंतराव का जब कभी पूनामें आगमन होता वे अपने मित्र और मराठी के सफल प्रकाशक श्री दयार्णव कोपर्डेकरके यहाँ ही उतरते थे। इससे उनके नये मित्र प्रायः नाराज रहते थे और यह जानने की कोशिश करते थे कि वह है कौन, जिसके यहाँ वे हमारा अत्याग्रह छोड कर भी उतरते हैं। एक बार इसी तरह भूतपूर्व विधायक श्री बाबासाहब घोरपडेने यशवंतराव को अपने यहाँ उतरने का न्यौता दिया। लेकिन यशवंतराव श्री कोपर्डेकर के यहाँ ही उतरे। और श्री घोरपडे के पूछ-ताछ करने पर वे उन्हें श्री कोपर्डेकर के यहाँ लिवा ले आये और उनका परिचय देते हुए बोले: "इनके पिता और माता को मैं अपने माता-पिता तुल्य मानता हूँ। और यह मेरा लंगोटिया यार होकर मुझे सगे भाई से भी ज्यादा प्यार करता है। तभी मैं इसके यहाँ उतरना पसंद करता हूँ।"

यशवंतराव का निजी-जीवन संदेह से परे और साधन-शुचिता से ओत-प्रोत है इसकी साक्षी उनके कट्टर विरोधक भी देते हैं। विशाल द्विभाषिक के मुख्यमन्त्री के रूपमें बम्बई राज्य की सर्वोच्च सत्ता के सूत्र-संचालक होते हुए भी उन्होंने अपने निजी लाभका कोई कार्य नहीं किया। उनकी आर्थिक स्थिति पहले जैसी थी आज भी वैसी की वैसी बनी हुई है। पीछले दस-बारह वर्ष से लगातार शासन-यंत्रणा से जुडे हुए होने पर भी चार पैसे जमा कर नहीं पाये हैं। उनके स्थान के अनुरूप उन्हें जो वेतन और अन्य सुविधाएँ उपलब्ध हैं इसके उपभोग के अलावा उनके पास कुछ भी नहीं है। उन पर अपने स्वर्गस्थ दोनों ज्येष्ठ बन्धुओं के बच्चोंके लालन पालन और घर-गृहस्थी चलाने की महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी हैं, जो वे बडी ही निष्ठा से और अपनेपन से वहन कर रहे हैं। जब कभी कोई मंगल प्रसंग या कार्य आता है तब उन्हें और उनकी धर्मपत्नी सुश्री वेणुताई चव्हाण को सदा बँक से कर्ज निकालना पडता है। और फिर धीरे-धीरे कर्ज की अदायगी होती रहती है।

यशवंतराव राज्य-प्रशासन पद्धति इतनी तो सुस्पष्ट रखने के लिए सदा प्रयत्नशील रहते हैं कि कभी कभी उनके मित्र भी ऐसा अनुभव करने लगते हैं कि यशवंतराव उन्हें विस्मरण कर गये हैं। लेकिन वास्तव में ऐसी बात नहीं है। वे कोई भी कार्य ऐसा नहीं करते जिसके लिए जन-साधारण और

प्रशासनिक-यंत्र के मन में शंका का बीजारोपण हो सके। फिर भले ही उनके मित्र का ही काम क्यों न हों? अतः एसी अपेक्षा रखेनेवालों को उनसे निराश होना पडता है।

७ : सन् उन्नीससौ बयालीस

सन् १९४२, भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन का महत्व-पूर्ण काल था। दूसरा महायुद्ध कभी का प्रारंभ हो गया था। ब्रिटिश सत्ताने अपने स्वार्थ के लिए भारत को भी महायुद्ध के जाल में उलझा लिया था। फलतः देश की जनता और जननेता अत्यधिक नाराज थे। वे इस मौके पर आंशिक स्वराज्य की मांग कर रहे थे। लेकिन तत्कालीन ब्रिटिश प्रधान मंत्री सर विन्सटन चर्चीलने भारतीय जननेताओं की एक न सुनी और भारत के युद्ध में सम्मिलित होने की घोषणा कर दी। उस समय उद्‌भवित परिस्थिति पर आमूलाग्र विचार करने के लिए बम्बई में अखिल भारतीय काँग्रेस कार्य समिति की महत्त्वपूर्ण बैठक बुलाई गई थी। यह बैठक राष्ट्रपिता पूज्य बापू, पंडित जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल, गोविंद वल्लभ पंत, डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद, आचार्य कृपलानी, भारत कोकिला सरोजिनी नायडु, डॉक्टर पट्टाभि सीतारामैया, जयप्रकाश नारायण आदि नेताओं की उपस्थिति में और काँग्रेसाध्यक्ष मौलाना अबुल कलाम आजाद की अध्यक्षता में होनेवाली थी।

सारे देशकी आँखें बम्बई में होनेवाली काँग्रेस कार्यसमिति की आपत्कालीन बैठक की ओर लगी हुई थी। यशवंतराव भी उक्त बैठक के समय बम्बई में उपस्थित थे। कार्यसमिति ने प्रदीर्घ चर्चा के पश्चात् पूज्य बापू के नेतृत्व में 'ब्रिटिशों भारत छोडो' (Quit Iudia) का प्रस्ताव प्रसारित किया था। उस समय भाषण करते हुए पूज्य महात्मा गान्धीने भारतीय जनता को अपने उद्दिष्ट में सफलता प्राप्त करने हेतु 'करो या मरो' (do or die) का अमर संदेश दिया था। प्रस्ताव की कानोंकान खबर मिलते ही तत्कालीन भारत सरकार ने कार्यसमिति के सभी सदस्यों को उसी रात गिरफ्तार कर, अहमदनगर

के किले में बंद करने के लिए चुपके से रवाना कर दिया था। दूसरे दिन जब यह खबर सारे देश में वर्तमानपत्रों के जरिये प्रसृत हुई तब तहलका मच गया। सारे देशमें सख्त हडताल पडी, बडे पैमाने पर सरकार विरोधी निदर्शन किये गये। सभाएँ हुई। बडे-बडे जुलूस निकले। सरे आम ब्रिटिश सत्ता की खिल्ली उडाई गई और सरकार के चापलूसों का धिक्कार किया गया।

बम्बई की खबर कराड भी वेगसे पहुँच गई। कसबे में सख्त हडताल पडी। शामको प्रचंड सभा हुई, जिसमें सरकार की कटु आलोचना की गई। सभा के बाद पच्चीस-तीस विद्यार्थियों की श्री हरिभाऊ लाड़ के घर पर अनौपचारिक सभा हुई। आगे क्या करना चाहिए, यही एक जटिल समस्या सभामें उपस्थित लोगों को सता रही थी। सामुदायिक सत्याग्रह, असहयोग आन्दोलन, पिकेटिंग और व्यक्तिगत सत्याग्रह की धुंधली सी कल्पना सभी के दिमाग में चक्कर काट रही थी। लेकिन उससे 'क्विट इन्डिया' की भावना कहाँ मूर्तिमंत हो रही थी? गिरफ्तार हुए हमारे जननेताओं का आदेश था कि अब प्रत्येक भारतीय अपने आपको स्वतंत्र समझे और इसी भावना से प्रवृत्त हो, वह ब्रिटिश सत्ता को भारत से खदेड, बाहर करने के लिए कटिबद्ध हो जाय। लेकिन बम्बई बैठक की आँखों देखी परिस्थिति और आदेश जानने के लिए सभी उत्कंठित थे। यशवंतराव ९ आगस्ट को पहुँचेंगे—खबर से कराड निवासियों के उत्साह का पारावार न रहा। वे उनका स्वागत करने और नया आदेश पाने के लिए तत्पर बन गये। लेकिन पुलिस भी असावधान न थी। उसने यशवंतरावको स्टेशन पर गिरफ्तार करने की योजना तैयार की थी—फिर क्या 'न रहेगा बांस और न बजेगी बांसरी' अतः पहलेसे ही स्टेशन पर पुलिस का सख्त पहरा बैठ गया था। पुलिस-घेरे की बात सुन कर युवक-कार्यकर्ताओं के मना बैठ गये। पूना से आनेवाली प्रत्येक गाडी के प्रवासियों की कार्यकर्तागण उत्सुकता से टोह लेते और यशवंतराव को उनमें न पा कर राहत की साँस लेते रहते थे। मेल आई और गई। दूसरी कितनी ही गाडियाँ आई पर यशवंतराव उसमें भी न थे। पुलिस की सख्त निराशा हुई। हाँला कि कार्यकर्ताओंके निराशा का भी पारावार न था। फिर भी खुशी इस बात की थी कि अच्छा हुआ न आये, वर्ना मार्गदर्शन करने के पहले ही पुलिस गिरफ्तार कर लेती और सींकचों के पीछे अनिश्चित काल के लिए धकेल देती।

दूसरे सप्ताह के प्रारम्भ में ही वे विद्यार्थियों की गुप्त सभा में यकायक प्रकट हुए। उन्होंने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा: "यह आन्दोलन सरकार के

ख्याति प्राप्त कर ली थी। फलतः वे सरकार की आँखों में काँटे की तरह खटकने लगे। वह उन्हें शीघ्रातिशीघ्र गिरफ्तार करना चाहती थी। पर निरुपाय था। आखिरकार सरकारने एक असाधारण विज्ञप्ति के जरिये श्री नाना पाटील, श्री किसन वीर, श्री बाबुराव चरणकर, पांडू मास्तर और यशवंतराव को गिरफ्तार करानेवाले को १००० रुपये का नकद इनाम घोषित किया। लेकिन अंत तक वे किसी के हाथ न आये और भूमिगतों का नेतृत्व करते रहे।

यशवंतराव जिस तरह एक कुशल संगठक है ठीक उसी तरह उनमें दूरदृष्टि और कुटनीतिज्ञ की पैनी बुद्धि भी है। जिस दृष्टि को लक्ष्य में रख, उन्होंने ९ अगस्त ४२ को भूमिगत-आन्दोलन का सूत्र-पात किया था उसी तरह सन् १९४३ के मध्य में उनकी दूरदर्शी बुद्धि ने परख लिया कि बयालीस के आन्दोलन की जनशक्ति अब दिन-ब-दिन शिथिल होती जा रही है। सारे देश में निराशा का ज्वार आगया है। पूज्य बापू जेल से रिहा कर दिये गये हैं और आन्दोलन स्थगित करने की आवाज धीरे-धीरे बल पकडती जा रही है। अतः हमें भी अपने जिले के आन्दोलन के बारे में पुनः सोच-विचार करना चाहिए और अवसर मिले तो पूज्य बापू का मागदर्शन प्राप्त कर खुद को सरकार के हवाले कर देना चाहिए। सेनापति को ज्यों व्यूह-रचना की संपूर्ण जानकारी होना परमावश्यक है त्योंही समय आने पर युद्ध को स्थगित कर अपनी हानि रोकने की नीति में भी पारंगत होना चाहिए। तदनुसार यशवंतराव ने आन्दोलन स्थगित करने विषयक अपने विचारों से सहकार्यकर्ताओं को पहले से ही अवगत कर दिया था। काफी चर्चा-विचारणा के पश्चात् अस्थायी तौर पर आन्दोलन स्थगित करने के लिए सब की सम्मति प्राप्त हो सकी थी—लेकिन गान्धीजी के कथनानुसार स्वयं को पुलिस के हवाले करने के बारे में सभी का कडा विरोध था। परिणामस्वरूप आन्दोलन का ऐक्य बनाये रखने लिए यशवंतराव स्वयं भी गिरफ्तार होने तक भूमिगत ही बने रहे।

यशवंतरावने भूमिगत कार्यकर्ताओं का जो सुदृढ संगठन निर्माण किया उसके बदौलत सारे महाराष्ट्रमें सन् ब्यालीस के आन्दोलन में सातारा जिला सिरमौर रहा। इस संगठनने आगे चल कर प्रति सरकार और ग्रामराज्य संस्थाओं को जन्म दिया उसके पीछे यशवंतराव की दीर्घदृष्टि और संगठन-चातुर्य ही काम कर रहा था। सन् बयालीस की क्रांति का सिंहावलोकन और उससे काँग्रेस-संगठन की शक्ति में हुई वृद्धि पर विचार करते समय प्रायः यशवंतराव कहते हैं :

कारागृह भरने का नहीं है बल्कि 'करो या मरो' का जयघोष दिगन्त में गूंजा कर सदियों से कुंभकर्णी-नींद में बेखबर पडी जनता-जनार्दन को जगा कर आजादी का जंग शुरू करनेका है। हमारे सर्वस्व का तो बलिदान इसमें होगा ही साथ ही समय आने पर स्व-प्राणों की आहुति भी देनी होगी। देशमें पैदा हुई विषम परिस्थिति और उसमें तुम्हारा अपना स्थान निश्चित करने के पहले अच्छी तरह विचार कर लेना। वर्ना आगे जाकर पश्चात्ताप करने का अवसर न आवे। तुम्हें अपने माता-पिता, सगे सम्बंधी, पढाई-लिखाई सभी को तिलांजलि देनी होगी। भावी जीवन की जो सुखद कल्पनाएँ की हैं वे सब क्षणार्ध में चकनाचूर हो जाएँगी। यह सब कर गुजरने का जिसमें साहस है, उत्साह है, उत्कंठा है वही क्रांति का सैनिक बन सकेगा। जो इसके लिए तैयार हैं—उसे मैं भावी-कार्य की रूपरेखा बताने को तैयार हूँ।" इनके इस कथन पर पूर्ण विचार कर लगभग चालीस-पचास विद्यार्थी शालेय शिक्षण का परित्याग कर स्वतंत्रता आन्दोलन में सम्मिलित हुए। कराड़ जैसी पंदरह हजार आबादी के कस्बे में चालीस-पचास कार्यकर्ताओं का सोत्साह देश की आज़ादी के लिए हर प्रकार की यातनाएँ सहने के लिए तैयार होना यशवंतराव की अलौकिक लोकप्रियता और कुशल नेतृत्व का उत्कृष्ट उदाहरण है।

बयालीस के आन्दोलन में भूमिगत प्रवृत्तियाँ करने के लिए नौजवानों का जो एक गुट तैयार हुआ, उसकी बागडोर यशवंतराव के ही हाथमें थी। इस तरह जिलेका नेतृत्व करने की उनकी यह दूसरी बारी थी। पहली बार व्यक्तिगत-सत्याग्रह के दिनों में जब जिलाध्यक्षने सत्याग्रह कर कृष्णमंदिर की राह ली थी तब एक वर्ष तक वे स्थानापन्न जिलाध्यक्ष मनोनीत हुए थे और इस बार भूमिगत कार्यकर्ताओंकी सर्वसम्मति से सर्वाधिकारी (dictator) बने थे। यशवंतराव के कार्यग्रहण करने से कराड के विद्यार्थियों के जिम्मे जिले में बुलेटिन्स बाँटना, संदेश पहुँचाना, प्रचार करना, मोर्चे निकालना और उनका नेतृत्व करना, स्टेशन, मालगोदाम, और डाकगाडी लूँटना तथा जलाना, टेलिफोन के तार तोडना, सरकारी कार्यों में अवरोध उपस्थित करना आदि कार्य विध्वंसक कार्य थे, जिन्हें हर नौजवान ने बड़ी ही सावधानी और निष्ठापूर्वक निभाया था। जिले के कराड़, वडुज, पाटण, वालवे, तासगाँव आदि कस्बों में यशवंतराव सरकारी कचहरियों पर बहुत बडे पैमाने पर जन-मोर्चे संगठित कर ले गये थे और उनका योग्य मार्गदर्शन भी किया था। अल्पावधि में ही सातारा जिले के विद्रोही नौजवानों की प्रेरक-शक्ति के रूपमें यशवंतराव ने

"प्रस्तुत आन्दोलन से काँग्रेस संस्था को कितने नौजवान, एकनिष्ठ कार्यकर्ता उपलब्ध हुए उसी पर इसका यशापयश अवलम्बित हैं।" यशवंतराव के पश्चात् जिले का सूत्र-संचालन उनके सहयोगी मित्र श्री पांडू मास्तर, श्री के. डी. पाटील और श्री किसन वीर के हाथों में गया, जिसे उन्होंने अंततक बड़ी योग्यता से चलाया।

भूमिगत जीवन में यशवंतराव का स्थायी निवास पूना में ही था। जब कभी आवश्यकता पडती वे दो-चार दिनों के लिए बाहर जाते और काम निपट कर लौट आते। उस समय उनके साहित्यिक मित्र श्री दयार्णव कोपर्डेकर का वास-स्थान पूना में था। यशवंतराव खाने-पीने और सोने के लिए उनके घर जाया करते थे। लेकिन उन पर कभी संकट नहीं आने दिया। इसका मूल कारण था उनकी संयमित वृत्ति और सतत सजगता! महाराष्ट्र के दूसरे भूमिगत कार्य-कर्ताओं की तरह इन्होंने भूल कर भी कभी वेश-परिवर्तन नहीं किया और ना ही कभी अतिशियोक्तिपूर्ण बर्ताव। उन्होंने कभी दाढी-मूंछ नहीं लगाई। वे प्रायः अपने सारे लिबास धोती, नेहरू शर्ट, टोपी और जॅकेट में ही रहते थे। भूमिगत जीवन में भी यशवंतराव समय के पूरे पाबन्द थे। समय-बेसमय कभी कहीं वे भटकते नज़र नहीं आये। उनका अपने मित्र श्री कोपर्डेकर पर अटूट विश्वास था। पूना में उनके सारे कार्यक्रमों की जिम्मेदारी श्री कोपर्डेकर की होती थी। जब कभी किसी कार्यकर्ता को यशवंतराव से मिलना होता या यशवंतराव किसी से मुलाकात लेना चाहते तो उनके मुलाकात की व्यवस्था श्री कोपर्डेकर ही किया करते थे। ऐसी भेंट-मुलाकातें और गोष्ठियों का आयोजन पूना के विभिन्न स्थानों पर उनके मित्रों के यहाँ हुआ करता था। लेकिन यशवंतराव खुद इतने सावधान रहते थे कि कभी किसी मित्र का बाल भी बांका न हुआ।

समयसूचकता के कारण एक बार वे गिरफ्तार होते बाल बाल बच गये। यह घटना उनके भूमिगत जीवन में ही घटित हुई थी। एक बार वे जंगली महाराज रोड़ पर अपने मित्र श्री सदु पेंढारकर और दूसरे मित्रों के साथ बैठे ताश खेल रहे थे। उस समय किसी गुप्तचरने देख लिया। उनकी गिरफ्तारी के लिए १००० रुपये का नकद इनाम पहले ही घोषित हो चुका था। गुप्तचर ने यह खबर पुलिस कचहरी में दी और रातमें अचानक छापा मार कर उन्हें गिरफ्तार करने की योजना बनाई गई। सोने के बाद यशवंतरावको अचानक अपने पिताजी के एक मुस्लिम मित्र के निमंत्रण का स्मरण हो आया। उनके यहाँ कोई धार्मिक उत्सव था और उसका प्रसाद लेने के लिए बुलाया था। रातका कोई ११-१२

का समय होगा। इतनी रात गये किसी के यहाँ जाना ठीक नहीं। अतः उनका मन आनाकानी करने लगा। लेकिन कोई अदृश्य शक्ति उन्हें बार बार विवश कर रही थी जाने के लिए लश्कर (camp) में उन मुस्लिम सज्जन के यहाँ! आखिर रातके कोई बारह बजे वे अपने पिताजीके बुजुर्ग मित्र के यहाँ जाने का निश्चय कर घर से निकल पडे। प्रातः चार बजे उन्हें गिरफ्तार करने के लिए पुलिसने छापा मारा। लेकिन यशवंतराव वहाँ न मिले। उनके मित्र सदु पेंढारकरको ही पुलिस गिरफ्तार कर सकी। पुलिस की निराशा का पारावार न रहा। अगर यशवंतराव रातमें वहाँ से निकल न जाते तो गिरफ्तार होते देर न लगती। आगे चल कर सदु पेंढारकर की जेल में ही मृत्यु हुई।

लाख कोशिश के बावजूद भी जब पुलिस यशवंतराव को गिरफ्तार करने में सफल न हुई तब पुलिस ने दूसरा मार्ग अपनाने का निश्चय किया। वे नाना प्रकार से चव्हाण परिवार को कष्ट देने लगे। पुलिसने सर्वप्रथम उनकी धर्मपत्नी सुश्री वेणुताई को गिरफ्तार कर सींकचों में बंद कर दिया। फलतः परिवार के लोगों को अत्यंत वेदना और व्यथा पहुँची। वैसे भी यशवंतराव के जीविकोपार्जन के लिए आवश्यक कार्यों को छोड राजनीति में सक्रिय भाग लेना। उनके गरीब परिवार के लिए आर्थिक विषमता को बुलावा देना ही था। फिर भी यशवंतराव के अलावा परिवार के दूसरे सदस्यों को किसी बात की तकलीफ न थी। लेकिन सुश्री वेणुताई की अचानक गिरफ्तारी से परिवार के दूसरे सदस्यों के साथ वयोवृद्धा सुश्री विठाबाई को भी जबरदस्त आघात पहुँचा। इसका असर वेणुताई पर भी जेलमें हुआ, फलस्वरूप कित्येक वर्ष तक उन्हें फिटस् आती रहीं। दो महीने तक प्रतीक्षा कर सरकारने सुश्री वेणुताई को रिहा कर, इनके मंझले बन्धु श्री गणपतराव को स्थानबद्ध किया और भानजे बाबुराव पर स्टेशन जलाने के अपराध में मुकदमा चलाया। इससे यशवंतराव के क्रोध का पारावार न रहा। वे सरकार के ऐसे षडयंत्रों से अनभिज्ञ थे ऐसी बात नहीं—पर सरकार इस हद तक निर्दोष और निरपराधों पर जुल्म गुजार सकती हैं—इस बातका गुस्सा था। उन्होंने अपने प्रकट न होने से सरकार द्वारा आये दिन आनेवाली आपत्तियों से परिवार को बचाने हेतु खुद को पुलिस के हवाले करने का मन ही मन निश्चय किया। और तदनुसार पूना केम्प में अपने रिश्तेदार के यहाँ उतरे सातारा जिले के एक पुलिस अधिकारी के समक्ष अचानक प्रकट हो कर उन्हें गिरफ्तार करने का अनुरोध किया। यशवंतराव को यों अचानक प्रकटा देख, पुलिस अधिकारी स्तिमित हो उठा। यशवंतराव को गिरफ्तार कर, वह देशद्रोही

रहे कमल की तरह पवित्र रहना चाहिए—ऐसा उनका दृष्टिकोण है। जबकि नाना पाटील दबावमूलक राजनीति का अवलम्बन कर अपना काम निकालना आद्य-कर्तव्य समझते थे। सन् १९४६ में जब यशवंतराव बम्बई राज्यीय मंत्रीमण्डल में उपगृहमंत्री पद थे तब सातारा जिले के भूमिगत कार्यकर्ताओं के सम्मानमें जगह जगह पर सत्कार समारोह आयोजित किये गये थे। एकाध दो प्रसंग पर यशवंतराव भी उपस्थित थे। वहाँ पर उन्होंने विचित्र दृश्य देखा। भूमिगत आन्दोलन की सफलता का सारा श्रेय नाना पाटील और उनका कुंडल गुट लेने पर तुला हुआ था। आगे चल कर इस गुटने जिला लोकल बोर्ड की अध्यक्षता के लिए अपनी पसंदगी का उम्मिदवार खडा किया और काँग्रेस सदस्योंको इसका समर्थन करने का आदेश दिया। यशवंतराव इस परिस्थिति से सजग थे। काँग्रेस संगठन और जिला बोर्ड के काँग्रेसी सदस्योंकी निर्भीक वृत्तिसे वे पूर्णतया परिचित थे। वे भली-भाँति जानते थे कि एक भी कार्यकर्ता दबावमूलक राजनीति का भोग कभी नहीं बनेगा। फिर भी उन्होंने उन्हें निर्भय बनाना उचित समझा और जिला बोर्ड के सदस्यों को अपने मन पसंद उम्मिदवार को अध्यक्ष पद के लिए मत देने का स्पष्ट आदेश दिया। क्रांतिवीर नाना पाटील की अपनी आंशिक भूल के कारण राजनैतिक अखाडे में यह सबसे पहली सख्त पराजय थी। तब से हमेशा के लिए दबावमूलक राजनीति पर नियंत्रण आ गया।

विदेशी सरकार के विरुद्ध भूमिगत-संगठन ने जिस आतंकवादी नीति का अनुशरण किया था वही नीति जनतंत्रीय सरकार शासनारूढ होने पर भी आगे जारी रखना कहाँ तक उचित है—यह एक जटिल समस्या थी। यशवंतराव इस प्रकार की नीति के बिलकुल खिलाफ थे। उनकी दृष्टि से भूमिगतों को अब भी वास्तविक परिस्थिति का पूरा आकलन नहीं हुआ है—अतः उन्हें सही मार्ग सुझाना चाहिए ऐसा प्रयत्न था। दूसरे लोगों की भाँति भूमिगतों के बारे में यशवंतराव के मन में पूर्वग्रह या दूषित भाव न था। बल्कि स्वतंत्रता आन्दोलमें अगर किसीने सबसे बडा त्याग किया है तो वह केवल भूमिगत कार्यकर्ताओं ने ऐसी उनकी दृढ मान्यता थी। अतः भूमिगत कार्यकर्ताओं का अजेय गढ सातारा जिला काँग्रेस में है या नहीं ? जब यह चर्चा चल पडी; तब महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेस समिति की बेलापुर-बैठक में यशवंतराव ने बडे ही प्रभावशाली ढंग से भूमिगत आन्दोलन का समर्थन करते हुए कहा था : "सातारा जिला काँग्रेस में है या नहीं—यह बात तो मुझे पता नहीं। लेकिन आज अगर कहीं काँग्रस है तो वह केवल सातारा जिले में ही है।"

बनना नहीं चाहता था। अतः उसने अल्पावधि तक कुछ सोच-विचार कर यशवंतराव से हस्तान्दोलन किया और उन्हें वहाँसे शीघ्र ही निकल जाने का आग्रह किया। इस उदाहरण से ही हम अनुभव कर सकते हैं कि देश की आजादी के लिए जिस कदर जनता और जननेता उत्सुक थे और स्वराज्य के स्वप्न को साकार करने में तन, मन, धन से जुटे हुए थे ठीक उसी कदर सरकारी अधिकारी भी देश को आजाद देखना चाहते थे।

यशवंतराव की गिरफ्तारी भी विचित्र ढंग से हुई। वे भूमिगत रह कर सातारा जिलेके भूमिगतोंका सूत्र-संचालन पूना से करते थे। एक बार उन्हें अपने भूमिगत मित्रों से पता लगा कि उनकी पत्नी सुश्री वेणुताई सख्त बीमार है। वैसे तो जब से सरकारने उन्हें गिरफ्तार कर स्थानबद्ध कर रखा था तब से उन्हें फिट्स आनी शुरू होगई थी और उनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता था। मानसिक, आर्थिक और राजनैतिक विषमता ने उन्हें सख्त बीमारी में पटक दिया। बचने की कोई उम्मिद न थी। यशवंतराव इस घटना से चिंतित हो उठे। सुश्री वेणुताई को वे अपनी उन्नति और उत्कर्ष की नींव का पत्थर मानते हैं। उनकी दृष्टिमें वह सच्चे अर्थ में गृहरानी है। जब से सुश्री वेणुताई का चव्हाण-परिवार में पदार्पण हुआ तभी से उन्नति के द्वार खुल गये। यशवंतराव के मित्र सुश्री वेणुताई को उनकी भाग्यलक्ष्मी मानते हैं और स्वयं चरित्र-नायक भी उन्हें बहुत चाहते हैं। अतः अपनी प्रिया की बीमारी सुनकर उनका विचलित होना स्वाभाविक था। उन्होंने सुश्री वेणुताई के पास गुप्त रूपसे फलटण जाने का निश्चय किया। तदनुसार वे फलटण गये और बीमार पत्नी से भेंट की। सुश्री वेणुताई को सांत्वन मिला। उनमें जीने की इच्छा तीव्र हो उठी। यशवंतराव भी अस्वस्थ पत्नी की सेवा-शुश्रूषा में तन, मन से लग गये। लेकिन विधि की लीला अपरंपार है। उसे न कभी किसीने पहचाना है और न कोई पहचान सकेगा। यशवंतराव की फलटण में उपस्थिति की खबर न जाने कैसे पुलिस को लग गई। पुलिसने छापा मार कर २१ अप्रेल १९४४ को उन्हें फलटण में गिरफ्तार किया।

क्रांतिवीर नाना पाटील के लिए यशवंतराव के मन में असीम श्रद्धा और आदर की भावना थी। लेकिन उनके नामपर जो घोटालें शुरू हुए उससे उन्हें दिली नफरत थी। फलतः दोनों में मतभेद होगये। वैसे भी यशवंतराव को झूठी शानोशौकत और ढकोसलोंसे नफरत है। वे ध्येयनिष्ठ प्रामाणिक कार्यकर्ता को हृदय से चाहते हैं। राजनीति के गन्दे खेल में भी हर कार्यकर्ता को कीचडमें

८ : पारिवारिक जीवन

विकट आर्थिक परिस्थिति का सामना करते हुए सतत अभ्यास शुरू रखकर सन् १९४० में यशवंतराव ने बी. ए. एल. एलबी. की परीक्षा उत्तीर्ण कर 'वकालात' की सनद प्राप्त की। अत्यंत बुद्धिमत्ता, अद्‌भुत प्रतिभा, कानुनी व्यासंग, उत्तम वक्तृत्वशक्ति और राजनैतिक कार्यों के कारण उत्पन्न परिचित-वर्ग के बल पर उन्होंने केवल छह महीने की अल्पावधिमें ही अपनी वकालात की धाक कराड और आसपास के प्रदेश में अच्छी तरह जमा ली। वृद्ध माता विठाबाई तथा ज्येष्ठ भ्राता ज्ञानोबा और गणपतराव का वर्षों पुराना स्वप्न साकार हो उठा था। यशवंतराव अब पारिवारिक जिम्मेदारियाँ उठाने के लिए पूर्णरूपसे तैयार होगये थे। श्री गणपतराव व्यापार-वाणिज्य में सक्रिय बनकर कुटुंब की आर्थिक परिस्थिति सुधारने में दत्तचित्त थे। गणपतराव और यशवंतराव की कमाई से एकाध-दो वर्ष में ही चव्हाण-परिवार को आर्थिक स्थैर्य प्राप्त हो, भाग्य का 'सितारा' बुलन्द होनेवाला था। इन्हीं कल्पनाओं में खोई वृद्धा माँ की खुशी का पारावार न था। अपना बेटा काफी पढ-लिख गया; सफल वकील बना—इस बातका उन्हें अभिमान था। अब केवल एक-ही इच्छा बाकी थी। बेटे का बड़े धामधूम से विवाह। मँगनियाँ आने लगी। यशवंतराव को अपना दामाद बनाने के के लिए 'मराठा-समाज' के दिग्गज-परिवार चव्हाण परिवार के घर के चक्कर काटने लगे। लेकिन यशवंतराव की मनीषा उच्च-घराने की कन्या लेनेके बजाय अपने परिवार के लायक कोई अच्छी और गुणी कन्या लेने की थी। फलस्वरूप वकालात की सनद लेने के एक वर्ष बाद ही उपयुक्त कन्या उन्होंने खोज निकाली और उसे अपनी जीवन-सहचरी बनाने का निर्णय लिया।

उस समय विश्व के क्षितिज पर युद्ध के ध्रुव-तारे का उदय हो चुका था। विज्ञान विनिपात का साधन बन गया था। विरोधी शक्तियाँ परस्पर भिड चुकी थीं। भारत के राजनैतिक वातावरण में भी नई हलचल आने की कल्पना से देशके जननेता आशंकित था। विपत्ति के बादल घिर आये थे। ऐसा लग रहा था कि देश की आजादी के लिए देश को पुनः एक बार प्रचन्ड शक्ति से मोर्चा लेना पडेगा। ऐसे समय सन् १९४२ के मई में यशवंतराव का सौभाग्यकांक्षिणी सुश्री वेणुताई के साथ शुभ-मुहूर्त में पाणिग्रहण हुआ। विवाह

के अवसर पर जिले के कार्यकर्ता, किसान-समाज और प्रदेश के अग्रगण्यों का शुभाशीर्वाद देने के लिए जमघट लग गया था। कराड में इससे पूर्व इतना बड़ा समुदाय किसी के विवाह में एकत्रित न हुआ था। यह उनके अल्पावधि में अर्जित अपूर्व लोकप्रियता का उत्कृष्ट उदाहरण था।

विवाह को अभी कुछ ही दिन व्यतीत हुए थे कि सन् बयालीस के प्रचंड आन्दोलन के शंख और नगाड़ें बजने शुरू हो गये। ब्रिटिश सरकार की ओर से भारतीय जननेताओं के साथ समझौता वार्ता करने के लिए सर स्टेफर्ड क्रिप्स का भारत में आगमन हुआ। उनकी योजना भारतीय नेताओं को पसंद न आई। वार्ता-भंग हुई। पूर्व में जापान की दिन-ब-दिन विजय हो रही थी। भारतीय सीमाएँ खतरे से खाली न थीं। सभी के मन आतंकित थे। इधर राष्ट्रीय महासभा काँग्रेस ने पूर्ण स्वतंत्रता का पुनरोच्चार किया। फलतः सरकारी दमनचक्र और परदेशी आक्रमण की आशंका से भारतीय जनता और भी आशंकित हो उठी। वैवाहिक जीवन के प्रारम्भ में ही उद्भवित विविध घटना-प्रवाहों से यशवंतराव की मनःस्थिति अस्थिर-सी बन गई थी। शैशव से ही राजनीति से सक्रिय-सम्पर्क होने के कारण यशवंतराव के मन पर राजनैतिक दैनंदिन घटनाओं का परिणाम होना स्वाभाविक ही था। परिणय के तत्काल पश्चात् प्रस्थान की बेला आगई। बम्बई में काँग्रेस का महत्वपूर्ण अधिवेशन और 'Quit India' का प्रस्ताव! सरकारी दमनचक्र का दौर जोर पर था। गोलीबार, अश्रुवायु और छडीमार की घटनाएँ दैनंदिन होगई थीं। बम्बई अधिवेशन के पश्चात् भूगर्भ संगठन का नेतृत्व करने यशवंतराव भी आन्दोलन की लपटों में कूद पडे। फलतः वकालात बन्द हो गई। आमदनी का जरिया टुट गया। आर्थिक अस्थिरता में राजनैतिक प्रतिकूल प्रवृत्ति ने और भी वृद्धि कर दी। चव्हाण-परिवार पर आपत्ति के बादल छा गये। वृद्ध माता और ज्येष्ठ बन्धु की मानसिक शांति गायब होगई। नवपरिणीता के मन पर भी सख्त आघात पहुँचा। भूगर्भ आन्दोलन का नेतृत्व करते यशवंतराव कभी कभी प्रकट हो कर परिवार, वृद्ध माँ और ज्येष्ठ बन्धु को धीरज से काम लेने का अनुरोध करते रहते थे। लेकिन प्रखर ध्येयनिष्ठा की कसौटी के अनन्तर प्राप्त अपूर्व धैर्य और मानसिक शांति भला लौकिक जीवनोपभोग करनेवाले लोगों में कैसे हो सकती है? परिणामतः बारबार सांत्वन-आश्वासन से पारिवारिक दुःख कम न हुआ बल्कि समय के साथ बढता ही गया। उसमें भी पुलिस की झंझट रात-दिन पीछे लगी हुई थी सो अलग।

इस तरह चव्हाण-परिवार पर आपत्ति और संकटों का पहाड़ टूट पडा। कहते हैं न कि जब आपत्ति आती है तब चारों ओर से आती है। यह सूक्ति यहाँ चरितार्थ हुई। इसी दौरानमें ज्येष्ठ बन्धु ज्ञानोबा की रीढ की हड्डी में कुछ बिगाड होगया। डॉक्टर ने शल्यक्रिया की सलाह दी। तदनुसार शल्यक्रिया की गई, पर उसीमें उनकी मृत्यु होगई। सबको आकाश फटे-सा आघात लगा। धीरज बंधानेवाला पुरुष आधार कोई न रहा। जिसने उन्हें ममता और स्नेह से पाला-पोसा। पिताजी की कमी याद न आने दी। उस देवतातुल्य बन्धु की बीमारी में सेवा-शुश्रूषा तो क्या लेकिन उसके अंतिम दर्शन करने का भी योग न आया—यह व्यथा-पीडा दीर्घावधि तक यशवंतराव के मनको खाती रही। ज्ञानदेव की मृत्यु का जबरदस्त आघात अगर किसी को पहुँचा हो, तो वह उनकी वृद्धा माता विठाबाई को। फिर भी वह वीरमाता मुँह से उफ् तक न बोली और सभी को सांत्वन देने में निमग्न हो गई। यशवंतराव के लिए अब माता का ही आधार शेष रह गया था।

देश की राजनीति में सुधार होनेके चिन्ह दिखाई दे रह थे। विपत्ति के बादल छंट गये थे। महात्मा गांधी, पंडित जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभ-भाई, मौलाना अबुल कलाम-से दिग्गज जननेताओं को ब्रिटिश-सरकारने मुक्त कर दिया था। इंग्लंड में नव-निर्वाचन हो कर लॉर्ड एटली के नेतृत्व में मजदूर-दल शासनारूढ हो गया था। पहले से ही मजदूर-दल का झुकाव भारत को स्वतंत्रता प्रदान करने की ओर था। उसने तत्कालीन भारतमंत्री लॉर्ड पेथिक लारेन्स की अध्यक्षता में 'त्रिमंत्री मिशन' भारत भेजा था। कारागृह में बन्द कार्यकर्ताओं की रिहाई की जा रही थी। तदनुसार सन् १९४५ में यशवंतराव की भी रिहाई हुई। सन् १९४६ के सार्वजनिक निर्वाचन में बम्बई इलाके में स्वर्गीय बाला-साहेब खेर के नेतृत्व में काँग्रेस मंत्रीमंडल गठित हुआ, जिसमें यशवंतराव की नियुक्ति उपगृहमंत्री के रूपमें हुई। उनका पारिवारिक जीवन तिमिराच्छन्न वातावरण में से प्रखर प्रकाश में परिवर्तित हो रहा था। घोर तपश्चर्या का फल मिल रहा था। राष्ट्र स्वाधीन हो चुका था। अब तो भारत के शिशु-जनतंत्र का संवर्धन, संरक्षण और संघटन करना ही काम रह गया। दुःख, पीडा, यातना और आपत्तियों की घनघोर रात्रि कट चुकी थी—सुख, शांति, समृद्धि और प्रगति की सुनहरी उषा फूट रही थी। लेकिन यशवंतराव की मुश्किलियाँ कम न हुईं। जेल में रहने पर जो आघात सुश्री वेणुताई को पहुँचा था और जिसके कारण वह प्रायः बीमार हो जाया करती थी उसने अब भी पीछा न छोडा। यशवंतराव के

लिए घर और कार्यालय एक हो गया था। राजकीय कार्य के लिए दौरे पर जाने का जब कभी अवसर आता तब उनका सारा ध्यान घर की ओर ही लगा रहता था। बडे से बडे डॉक्टरों के इलाज शुरू थे अतः उन्हें चिंता जैसा नहीं लगता था। इस तरह जीवनमें धूपछाँव का अनुभव करते एकाध-दो वर्ष व्यतीत होगये। इतनेमें अचानक ज्येष्ठ बंधु गणपतराव क्षय के शिकार होगये। रोगका निदान कर चिकित्सा करानेमें कोई कसर उठा न रखी। पर रात-दिन धंधे-रोजगार में लगे रहने के कारण और कराड नगरपालिका के अध्यक्ष की हैसियत से अधिकाधिक कार्यव्यस्तता से उनका स्वास्थ्य सुधारने के बजाय और गिरने लगा। फल यह हुआ कि सन् १९४८ में चव्हाण-परिवार का आधारस्तंभ और यशवंतराव का मुख्य आधार टूट गया। गणपतराव की मृत्यु होगई।

गणपतराव की बीमारी में रात-दिन सेवाशुश्रूषा में रत सुश्री वेणुताई भी कालांतर से क्षय की भोग बन गई। सामान्य बीमारी है—अच्छी होजायगी इसी गडबड और असावधानी में बीमार की स्थिति बिगडने लगी। हड्डियाँ निकल आई। उठने-बैठने में तकलीफ होने लगी। डॉक्टरोंने जवाब दे दिया बीमारी आखिरी छोर पर पहुँच चुकी थी। बचने की कोई उम्मिद न थी। विठाबाई की आंतरिक वेदना का पारावार न था। लेकिन यशवंतराव निराश न हुए। उन्होंने अपने परिचित डॉक्टरों से विचार-विमर्श कर सुश्री वेणुताई को मिरज अस्पताल में दाखिल करने का निश्चय किया। मिरज अस्पताल के प्रधान-चिकित्सक डॉक्टर जोन्सने रोगी का सावधानी से परीक्षण कर कहा : "स्थिति काफी गम्भीर है। मैं निश्चित कुछ नहीं कह सकता फिर भी आप इसे यहाँ छोड जाइए। मैं पंद्रह दिन तक औषधोपचार कर अपना निश्चित मत व्यक्त करूंगा।" डॉक्टर जोन्स की बात सुन कर सगे-सम्बंधियों की घबराहट बढ गई। उनके पैरों तले से जमीन खिसक गई। लेकिन यशवंत मेरु-गंभीर बने रहे। उन्होंने सुश्री वेणुताई को स्नेहसिक्त वाणीमें आश्वासन के दो शब्द कहते हुए कहा : "चिंता की कोई बात नहीं, तुम अच्छी हो जाओगी।" और पंद्रह दिन के बाद लौटने का वादा कर सरकारी काम से राज्य-व्यापी दौरे पर निकल पडे। वेणुताई मन ही मन समझ गई थी कि अब उसकी अंतिम घडी निकट है। पर उन्हें अपने पति के आश्वासन में अटूट श्रद्धा थी। पंद्रह दिन के बाद यशवंतराव लौटे और डॉक्टर जोन्स से मिले। डॉक्टर ने बताया कि मरीज खतरे से बाहर है। चिंतित होने की कोई आवश्यकता नहीं। यशवंतराव की बाँछे खिल गई।

स्व. ज्येष्ठ बन्धु ज्ञानदेव और गणपतराव की जब कोई स्मृति दिलाते हैं तब

यशवंतराव का कंठ अवरुद्ध हो जाता है। चेहरे पर एक प्रकार की खिन्नता छा जाती है। और वे शोकविह्वल हो कहते सुने जाते हैं कि वे दोनों मेरे जीवन के मुख्याधार थे। उन्होंने मेरा लालन-पालन किया, मुझे पढाया-लिखाया। मेरा संवर्धन और संरक्षण किया। लेकिन जिनके प्रयत्नों से मैं बम्बई राज्य का मुख्य मंत्री बना, उन्नति के शिखर पर जा चढा उसे देखने के लिए उन दोनों में से एक भी जीवित न बचा।

९ : जननेता

सन् १९४६ के आम-निर्वाचनके पश्चात् बम्बई-प्रदेश में जो मंत्रीमंडल गठित हुआ-उसके प्रति प्रदेशके ही एक वर्ग में असंतोषकी आग भडक उठी। सर्वदृष्टिसे प्रतिनिधिमूलक मंत्रीमंडल होते हुए भी उनकी दृष्टिसे वह न था। बल्कि इससे भी एक कदम आगे रखकर असंतुष्ट-वर्ग ने बताया कि वर्तमान मंत्रीमंडल में प्रदेशकी आम-जनताको योग्य प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया है इस तरह बहुमतकी जान-बुझकर उपेक्षा की गई है। परिणाम स्वरूप इस समस्या का आमूलाग्र विचार करनेके लिए असंतुष्ट-वर्ग ने दो सभाएँ आयोजित की थीं, जिनमें से एक यशवंतरावकी अध्यक्षता में और दूसरी श्री मोरेकी अध्यक्षता में। प्रत्येक सभा में विधायिका दलके लगभग ८०-८५ विधायकों की उपस्थिति थी। विभिन्न लोगोंने विभिन्न मतप्रदर्शन किये। लेकिन यशवंतरावकी दृढ मान्यता थी कि आम-जनता का कल्याण राष्ट्र-कल्याण में संनिहित है और पुरोगामी विचार-धाराको लेकर ही उसे हम आसानीसे हल कर सकते हैं। और अपनी इसे लक्ष्य-सिद्धि के लिए दल के अन्तर्गत संगठित बनकर प्रयास करनेमें कोई हर्ज नहीं। इस योजनामें अपना सक्रिय साथ भी उन्होंने घोषित किया। पर वे भारतकी राजनैतिक गुत्थियोंको सुलझानेके लिए महाराष्ट्रमें या बम्बई इलाके में किसी स्वतंत्र-दल की आवश्यकता अनुभव नहीं करते थे। बल्कि ऐसे दलकी स्थापनासे आम-जनताके कल्याणके बजाय सत्ता-प्राप्तिके लिए परस्पर झगडे ही ज्यादा होंगे। वैर और

वैमनस्यकी भावना जोर पकड जाएगी। फलतः जनसेवा की कामना दूर होकर प्रदेशमें गन्दी राजनीति पनपने लगेगी ऐसी उनकी दृढ मान्यता थी और उन्होंने अपने ये विचार साथी विधायकोंके समक्ष भी साफ-साफ शब्दोंमें रखे। पर वहाँ यशवंतरावकी तरह दूरदर्शी दृष्टिकोण अपनानेकी तैयारी कहाँ थी। आखिर महाराष्ट्रकी राजनैतिक-क्षितिज पर 'कृषक-मजदूर पक्ष' का उदय होकर ही रहा।

कृषक-मजदूर पक्षकी स्थापना क्या हुई? महाराष्ट्रकी राजनीतिमें आँधी और तूफान आ गया। इस तूफान, जिसमें साम्प्रदायिक भावनाकी झंझा सम्मिलित थी, ने सारे महाराष्ट्रको ढंक दिया। महाराष्ट्र काँग्रेसके रथी-महारथियोंके कदम भी डगमग उठे। कित्येक उसमें धराशायी हो गये तो कित्येक अन्त तक टिके रहे और भविष्यमें आगे आ गये। कल तकके राष्ट्रीय विचारोंका संदेश घर-घर पहुँचानेवाले और काँग्रेसके रथको आगे बढानेमें सदा अग्रज रहनेवाले असंख्य काँग्रेस कार्यकर्ता और नेता चुटकीमें नये दलमें सम्मिलित होकर उसकी नींव पक्की करनेमें जुट गये। इससे महाराष्ट्र काँग्रेसमें भूचाल आगया। महाराष्ट्र काँग्रेसकी नौका डूबती है या रहती है? यह सोचकर काँग्रेस श्रेष्ठिवर्ग चिंतित हो उठा। ऐसे समय महाराष्ट्र-काँग्रेसकी हानिकी पूर्तिके हेतु जो निष्ठावंत कार्यकर्ता आगे आये। जिन्होंने अपनी खुली छाती पर कृषक-मजदूर पक्षके जहरीले, साम्प्रदायिक विचारोंसे सने बाणोंको हँसते हँसते खेला और महाराष्ट्रके प्रत्येक गाँव तहसील और जिलेकी काँग्रेसको स्थिर करनेमें जो तन-मन-धनसे लग गये, उनमें पंजाबके वर्तमान राज्यपाल श्री काकासाहब गाडगील, श्री देवगिरीकर, श्री भाऊसाहब हिरे और यशवंतराव मुख्य थे। साम्प्रदायिकता की आँधी में ऐसे विरले कुछ ही थे जो देश पहले और फिर सब मानते हों। लेकिन यशवंतराव पहले से ही देशके प्रति निष्ठावान बने रहे हैं। उन्होंने जनतंत्रकी निष्ठामें ही, देशके प्रति निष्ठामें ही, आमजनताके प्रति निष्ठाके दर्शन किये। फलतः अंत तक उनके पाँव नहीं लडखडाये और उनकी राष्ट्रनिष्ठा अटल-अचल बनी रही।

पुराने काँग्रेसियोंके संगठनसे दूर होते ही जो स्थान रिक्त हुए थे उन पर नये और उत्साही कार्यकर्ताओंके दर्शन होने लगे। महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेस समितिके अध्यक्षके रूपमें नासिकके श्री भाऊसाहब हिरे का सर्वसम्मतिसे चुनाव हुआ। जेधे-गाडगीलकी महाराष्ट्रमें रामलक्ष्मणके रूपमें प्रख्यात जोडी टूटते ही हिरे-गाडगील-चव्हाणकी त्रिमूर्ति प्रदेशमें धूम मचाने लगी। जेधे-मोरेके काँग्रेस परित्याग से हुई दलकी हानिको पूरी करनेकी महद्पूर्ण जिम्मेदारी हिरे, गाडगील,

जब कभी भाऊसाहबसे मतभेद होनेका प्रसंग आया तब यशवंतरावने पीछे हट कर लेनेमें ही अपनी दलनिष्ठा समझी। कितने ही अवसरवादियोंने भाऊसाहब और यशवंतरावमें फूट डालनेके प्रयत्न किये, लेकिन यशवंतरावकी मुत्सद्दीगिरीने किसीका दाँव सफल न होने दिया।

सन् १९५२ के आम चुनावमें महाराष्ट्रमें काँग्रेसको विजयी बनानेका महत्व-पूर्ण उत्तरदायित्व भाऊसाहब और यशवंतरावके कंधों पर आया। विरोधी दलोंने काँग्रेसकी नींव खोखली करनेके लिए कमर कस ली थी। अतः ऐसी शक्तियोंको परास्तकर काँग्रेस के सिर पर विजयका सेहरा बाँधना था। हिरे-चव्हाणकी जोडी रणांगणमें उतर पडी। अपने साथी-संगातियोंको साथमें ले, महाराष्ट्रके प्रत्येक गाँवकी खाक छान ली—काँग्रेसका संदेश जन-जनमें पहुँचाया। सरकार द्वारा किये गये जनतोपयोगी कार्योंका सूक्ष्मतासे विवेचन कर किसान और मजदूर वर्गको काँग्रेसका हिमायती बनाया। फलस्वरूप विरोधी-दलोंके पांव ही उखड गये और महाराष्ट्रमें काँग्रेसके झंडे गड गये। और मोरारजी मंत्रीमंडलमें भाऊसाहब तथा यशवंतराव सम्मिलित किये गये।

संयुक्त महाराष्ट्रके प्रश्न पर यशवंतराव अंत तक भाऊसाहब हिरेका समर्थन करते रहे। लेकिन भाऊसाहब के इर्द–गिर्द जो वर्ग इकट्ठा हो गया था, वह उन्हें सदा गुमराह किया करता था। इसी टोलीने एकबार पूनामें 'यशवंतरावको काँग्रेससे निकाल दो' शब्दोच्चार किया था। इसका कारण यह कि जब तक महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेसमें यशवंतराव हैं तब तक उनकी योजनाएँ कार्यान्वित होना प्रायः असंभव-सा था। और इसी लिए यह सारी धमा चौकडी था। इसी गुटने संयुक्त महाराष्ट्रके प्रश्नको लेकर भाऊसाहबको अलग मार्ग चुननेकी सलाह दी। परिणाम यह आया कि यशवंतरावने जो बात कही, जो योजना उनके सामने रखी उसे सुनने और समझनेकी भाऊसाहबने परवाह ही न की। और इधर मूलभूत नीति एवं सिद्धांतोंका प्रश्न उपस्थित हो जानेके कारण यशवंतराव अपनी नीति-को छोडनेके लिए तैयार न थे। संयुक्त महाराष्ट्रका प्रश्न, राज्य पुनर्गठन आयोग-के समक्ष उपस्थित करने तक संयुक्त मोर्चेके साथ काँग्रेसका सहयोग ठीक था। लेकिन जब प्रत्यक्ष कृतिका प्रसंग आया तब महाराष्ट्रके अन्य दलोंके बजाय काँग्रेसकी स्थिति अलग थी। क्यों कि काँग्रेस ही केन्द्र तथा प्रदेशमें शासनारूढ पार्टी थी। अतः काँग्रेस श्रेष्ठिवर्गसे विचार विनिमय, समझौतावादी दृष्टिकोण एवं वार्तालापसे हल करता था जब कि विरोधी दल प्रचंड आन्दोलन, मोर्चे और शक्ति प्रदर्शनके जरिये इसे हल करना चाहता था। इस अवसर पर यशवंतरावका

H
923.254
CHA / PAR
G-27718
18/2/2018 Copy 2

देवगिरीकर पर आ पडी। उस समय यशवंतराव भी कंधेसे कंधा भिडाकर उनके साथ काम करने लगे। फिर तो तूफानी दौरे, धुआँधार भाषण, विचारोंका आदान-प्रादान, लेखमाला आदि सभी उपयुक्त तरीकोंसे काँग्रेसके गठन, संवर्धन और संरक्षण के लिए इन लोगोंने अपने प्राणोंकी बाजी लगा दी। भाऊसाहब हिरेकी कमजोरियोंको यशवंतरावने पूरा किया और यशवंतरावके असीम उत्साह तथा संगठन-चातुर्यका श्री हिरेने अपने कार्यसे बढावा दिया। इस तरह श्री भाऊसाहब हिरेके नेतृत्वको यशवंतरावने स्वेच्छया पुरस्कार किया और आम-जनताके हितार्थ काँग्रेस-दल ही श्रेष्ठ है—इसका लोगोंको विश्वास दिलाया।

भाऊसाहब हिरेने जेधे-मोरेके काँग्रेस संगठनसे चले जानेसे जो हानि हुई थी उसे पूरी करनेकी ऐतिहासिक जिम्मेदारी तो उठा ली। लेकिन वे मानते थे इतनी आसान न थी। जेधे-मोरे काँग्रेस-दलके जब अध्वर्यु माने जाते थे तब आम-जनतामें उनका विरोध करनेवाली कोई तुल्यबल शक्ति न थी। लेकिन भाऊसाहब को आम जनताके रूपमें खडी विरोधी शक्तिका सामना करना था। एक बार जिनके सान्निध्य में रहकर राजनीतिका सबक पढा था उन्हीं से टक्कर लेनी थी। अगर इस संघर्ष में भाऊसाहब बाजी मार जाय तो महाराष्ट्र में काँग्रेसका पलडा भारी होते देर न लगेगी। अतः यशवंतराव, श्री शंकरराव देव, सहजानंद स्वामी, ल. मा. पाटील, आदि नेता-गण भाऊसाहब के पीछे खडे हो गये।

इसी काल में सन् १९५० में अखिल भारतीय काँग्रेस महासमितिका अधि-वेशन नासिक में सम्पन्न हुआ। भाऊसाहब हिरे स्वागताध्यक्ष थे। लेकिन अन्य जिम्मेदारियाँ यशवंतराव के सिर थी, जिसे उन्हों ने बडी ही योग्यतासे निभाया। यशवंतराव की वैचारिक निष्ठा भाऊसाहब से उच्च दर्जे की होगी? फिर भी उन्होंने भूलकर भी कभी भाऊसाहब के नेतृत्वको चुनौती न दी। आम जनता के हितार्थ और दलनिष्ठा के कारण प्रायः उन्होंने समझौतावादी रूख ही अपनाया है। वे हमेशा ऐसी नीति अंगिकार करते जो भाऊसाहबकी विरोधक सिद्ध न होकर पूरक ही सिद्ध होती। ठीक वैसे ही भाऊसाहब भी यशवंतरावकी मेधावी बुद्धि, संगठन-चातुर्य और स्पष्टवादितादि गुणोंसे भली-भाँति परिचित थे। वे कोई भी कदम उठानेके पहले यशवंतरावसे सलाह-मशविरा अवश्य कर लेते थे। परिणामस्वरूप यशवंतराव भाऊसाहबके नेतृत्वमें कार्य करते थे फिर भी नीति या सिद्धांतोंकी बलिवेदी पर चढनेकी बारी न आवें अतः वे अपनी नीति और विचारोंसे साम्य ऐसे कार्यकर्ताओंका गिरोह बनानेमें अवश्य लगे हुए थे।

कहना था कि काँग्रेस कार्यकर्ताओंको संयुक्त महाराष्ट्र समितिसे दूर हो जाना चाहिये। लम्बी-चौडी बहसके पश्चात् सभीने त्याग-पत्र देकर संयुक्त महाराष्ट्र समितिसे सम्बंध-विच्छेद करनेका सर्वसम्मतिसे निश्चय किया, पर प्रत्यक्षमें केवल यशवंतरावने ही अकेले त्यागपत्र दिया। दूसरोंने चुप्पी साध ली। इस घटनाके बाद भाऊसाहब और यशवंतरावके मार्ग जुदा हो गये। जिस दलनिष्ठा और जनहितके लिए यशवंतरावको भाऊसाहबका नेतृत्व मान्य करना पडा था उसी जनता और दलके लिए उन्हें भाऊसाहबके नेतृत्वसे अलग होकर उसे तिलांजलि देनी पडी।

यशवंतरावके नेतृत्वमें साम्प्रदायिक चुनौतीके बजाय राष्ट्रीय भावना और पुरोगामी राजनीतिको चुनौती होनेके कारण बहुजनसमाजके नाम पर आगे बढे। भाऊसाहब, यशवंतरावके बजाय बहुजनसमाजमें अधिक प्रिय बन सके। यशवंतराव इस प्रकारकी लोकप्रियतासे कोसों दूर रहना ही पसंद करते थे। जबकि उनकी कुशाग्र बुद्धि, मेधावी प्रतिभा, संगठन-चातुर्य, कर्तव्यनिष्ठा एवं कार्यकुशलता भलेभलोंको मात कर दे ऐसी थी। इस प्रकार यशवंतरावकी राजनीति यानी टेढी खीर थी। उन्हें बहुजनसमाजका विश्वास संपादन कर पुरोगामी प्रजातंत्रीय निष्ठाको कायम रखनेका दुष्कर कार्य करना था।

महाराष्ट्र काँग्रेसमें जिस तरह यशवंतराव भाऊसाहब हिरेके नेतृत्वमें कार्यरत थे ठीक उसी तरह सन् उन्नीस सौ सयालीसके मंत्रीमंडलमें जब स्वर्गीय बालासाहब खेर प्रधानमंत्री थे और यशवंतराव संसदीय मंत्री तथा सन् बावनमें श्री मोरारजी देसाईके मंत्रीमंडलमें जब वे श्री मोरारजी देसाईसे प्रशासनिक यंत्रकी जानकारी प्राप्त कर उनकी निगरानी में कार्य-संलग्न रहे। मोरारजी देसाईकी गणना भारत के कठोर और एक योग्य प्रशासकके रूपमें सर्वत्र होती है। यह बात मोरारजीके कट्टर विरोधी भी निःसंदिग्ध रूपसे मान्य करते हैं। बाह्य-पठन, राजनीतिका सखोल अभ्यास और मेधावी बुद्धिने यशवंतरावको ज्यों युवावस्थामें ही मुत्सदी बना लिया ठीक त्यों ही मोरारजी देसाईके मार्गदर्शन और प्रशासनकी खूबियोंने यशवंतरावको एक योग्य प्रशासक बना दिया—जिसके फलस्वरूप वे इतने बडे विशाल द्विभाषिक का गुरुतर शासन-भार वहन करने में सफल सिद्ध हुए। विरोधियोंने यशवंतरावको श्री मोरारजी देसाईका पीछलग्गू, गूगाँ आदि कहकर नाना प्रकारसे बदनाम करनेका प्रयास किया। पर वे टससे मस न हुए। खेर मंत्रीमंडलके समय यशवंतरावकी मेज पर केवल एक ही तस्वीर थी—जिससे वे कार्य करनेकी सतत प्रेरणा पाते थे और वह थी श्री मोरारजी देसाईकी

तस्वीर! विशाल द्विभाषिक बना! श्री मोरारजी देसाईकी नियुक्ति भारतीय केन्द्रीय मंत्रीमंडलमें वित्तमंत्रीके रूपमें हुई। द्विभाषिकका मुख्यमन्त्री पद यशवंतरावको अपनी अनन्य निष्ठा, कार्यदक्षता एवं श्री मोरारजी देसाईके समर्थनसे मिला। और आज द्विभाषिक विजनकी अंतिम घडियाँ हैं। लेकिन श्री मोरारजी देसाई और यशवंतराव के सम्बंध आज भी अटूट हैं। जब कभी यशवंतराव दिल्ली जाते हैं श्री मोरारजी के यहाँ उतरते हैं और मोरारजी बम्बई आने पर यशवंतराव के घर! दोनोंका एक-दूसरे पर अत्यंत विश्वास और स्नेह है। खेर साहब के समय गणपतरावकी मृत्योपरांत जब यशवंतराव अपने कार्यालय कटे तब मोरारजीने स्नेहशील भावसे उन्हें आश्वासन देते हुए कहा था: "अभी आपकी आवश्यकता परिवार को है। कार्यालयकी जरा भी चिंता न करें। मैं सब ठीक कर लूँगा!" इस पर से पाठक-वर्ग श्री मोरारजी तथा यशवंतराव के पारस्परिक स्नेह-सम्बंधों की भलीभाँति कल्पना कर सकता है।

१० : कुशल प्रशासक

सन् उन्नीस सौ सयालीस के आम निर्वाचन में बम्बई विधान सभा के लिए निर्वाचित होने पर यशवंतराव को श्री बालासाहब खेर के मंत्रीमंडल में गृहविभाग का संसदीय मंत्री बनाया गया। उस समय इन पर दुहेरी जिम्मेदारी थी—सरकारी और काँग्रेस-संगठन में दल का संगठन सुदृढ करने की, जिसे इन्होंने बड़ी ही खूबी से निभाया। श्री मोरारजी देसाई की निगरानी में वे राज्य-प्रशासन की छोटी-मोटी समस्याएं सुलझाने में लग गये। उन दिनों बम्बई राज्यमें गृहरक्षक दल (Home Guard) की स्थापना अभी नयी नयी हुई थी, जिसके सूत्र हाथ में लेकर इन्होंने कार्यक्षम बनाने की पराकाष्ठा कर दी। कुछ विरोधियों ने संगठित रूपसे वालवे तहसील की गन्दी राजनीति के छींटे यशवंतराव पर उडा कर इन्हें जान बुझकर बदनाम करने के प्रयत्न प्रारम्भ किये थे। और इस तरह वे यशवंतराव को सदा के लिये सार्वजनिक जीवन से नेस्तनाबुद करना चाहते थे। यह तो ठीक, लेकिन इससे भी एक

कदम आगे बढ कर उन्होंने यशवंतराव का खून कराने का व्यवस्थित षडयंत्र रचा। लेकिन कहते हैं न कि 'जिसको देव तारे उसे कौन मारे?' यशवंतराव का बाल भी बांका न हुआ। जब उनके ज्येष्ठ बन्धु गणपतराव अत्यवस्थ थे तब उन्हें चिकित्सा के लिए ओगलेवाडी की खुली हवा में रखा था। यशवंतराव कराड आकर उनसे मिलने ओगलेवाडी गये और मिलकर पुनः लौटे। इतनी अवधिमें तो दो-तीन लोग, जिन पर खून करने का दायित्व था इनकी पूछ-ताछ और विशेष जानकारी प्राप्त करने हेतु वासस्थान पर आ चुके थे। यशवंतराव को जब पता चला तब उन्होंने केवल इतना ही कहा: "जितने तारे गगन में, उतने शत्रु होय। कृपा होय रघुनाथ की, तो बाल न बांका होय।" इस पर से ही हम उनके अद्‌भुत धैर्य की कल्पना कर सकते हैं।

पूज्य बापू की आकस्मिक हत्या से सारा भारत चौंक उठा। सभी की वक्र-दृष्टि हत्यारे और उसके प्रांतवासियों पर पडी। सारे महाराष्ट्र में हाहाकार मच गया। जिस मनोवृत्ति के वशीभूत होकर हत्यारे ने बापू जैसे शांतिदूत, महात्मा और देश को आजादी दिलानेवाले महामानव की हत्या करने के लिए कटिबद्ध हो, निर्मम हत्या की, उस मनोवृत्ति के अनुयायियों की सरे आम धज्जियाँ उडाने से जनता बाज न आई। महाराष्ट्र के कोने कोने में उस वर्ग के प्रति असंतोष, रोष और प्रतिशोध की भावना भडक उठी। सरकारने जनता को शांत करने के लिए हर तरह की कोशिश की और पीडितों को हर प्रकारकी सहायता दी। इस अवसर पर कराड़ में एक भी वारदान न हुई। इसी में यशवंतराव के वैचारिक नेतृत्व का रहस्य समाया हुआ है। साम्प्रदायिकता के प्रति उनका कड़ा विरोध सर्वश्रुत ही है; लेकिन एकाध समाज के दूषित साम्प्रदायिक दृष्टिकोण से अगर कोई दुर्घटना हो जाय तो इसकी सारी जिम्मेदारी समस्त समाज की है, मान कर उस पर अत्याचार करना और जुल्मों-सितम ढाना, न्याय नहीं है। ऐसे प्रसंग पर जनता का क्रोधित होना स्वाभाविक था—लेकिन उस क्रोध को अनिष्ट रूप धारण करने के पूर्व ही कार्यकर्ताओं को उसे अपने नियंत्रण में रखना चाहिए—ऐसा अपना स्पष्ट मत घोषित कर जिले के सभी कार्यकर्ताओं को दौरा करने का आदेश दे, खुद की निगरानी में शांति-स्थापना का कार्य सम्पन्न किया।

उस समय खाद्य-स्थिति बडी ही बदतर थी—और पूर्तिमंत्रालय को प्रायः विरोधी-नेता एवं आम जनता की कटु आलोचना का शिकार होना पडता था। फलतः योग्य व्यक्ति भी पूर्तिमंत्रालय का दायित्व वहन करने के लिए तैयार

होनेमें हिचकिचाता था। क्योंकि विषम परिस्थिति में सिवाय आलोचना और बदनामी के पल्ले और पडता ही क्या? यशवंतराव ने अद्‌भुत साहस का परिचय दिया और बम्बई राज्यीय पूर्तिमंत्रालय के सूत्र हाथमें लिये। कृषि, धान्य उत्पादन एवं अर्थशास्त्र जैसे विषयों में वे निपुण न थे लेकिन सामान्य मनुष्य का मनोगत परखने की शक्ति तथा व्यवहारकुशलता ये दो गुण उनमें सबसे बडे थे। गरीबी से बढने के कारण और संगठन-कार्य के समय विभिन्न लोगों से निकट का सम्पर्क आने की वजह से आम जनता की नाडी वे भली भाँति जानते थे। अतः अपनी व्यावहारिक बुद्धि ही पूर्तिमंत्रालय की तारक-शक्ति सिद्ध होगी—यह मन ही मन निश्चय कर बडी ही सावधानी से पूर्तिमंत्रालय विधेयक नई नीति अख्तियार करने का सिद्धांत अपना रहे थे। यशवंतराव का सौभाग्य था कि उन दिनों भारत सरकार में कृषि और खाद्य-मंत्रालय की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी स्वर्गीय रफी अहमद किदवई के सुदृढ कन्धों पर थी। स्व. किदवई साहब इससे पहले भारत सरकार के यातायात-मंत्री के रूपमें अच्छी-खासी ख्याति प्राप्त कर चुके थे। ठीक वैसे ही खाद्य और पूर्तिमंत्रालय का गुरुतर दायित्व अंगिकार कर गुप्त ढंग से बडेबडे व्यापारियों से मेल-मुलाकात कर उनका मनोदय और कठिनाइयों की तह तक पहुँच चुके थे। परिस्थिति का निरीक्षण और मनुष्य की परख ये दोनों गुण स्व. किदवई साहब और यशवंतराव में सम-प्रमाणमें थे। अतः सत्य परिस्थिति का आकलन करने में वे कभी नहीं चुकते थे। फलतः 'समानशीले व्यसनेषु सख्यम्' तरह प्रथम भेंट में ही दोनों में स्नेह की भावना निर्माण होते देर न लगी। यशवंतराव आयु में छोटे होते हुए भी स्व. किदवई साहब के स्नेह-भाजन बनने में सफल हो सके। परिणामस्वरूप भाषाविषयक वादग्रस्त प्रश्न पर दक्षिण भारतीय-नेताओं का मनोगत यशवंतराव स्व. किदवई साहब के माध्यम से प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू तक पहुँचाने में सफल हुए। स्व. रफी साहब पंडितजी के दाँये हाथ और घनिष्ट मित्र समझे जाते थे। रफी साहब की मृत्यु से यशवंतराव को ऐसे लगा जैसे राजकीय क्षेत्र का उनका एक बडा आधारस्तंभ ही टूट गया हो। बम्बई राज्यीय पूर्तिमंत्रालय को कार्यक्षम सिद्ध करने का सारा श्रेय वे स्व. रफी साहब को ही देते हैं। परिणामतः पूर्तिमंत्रालय का दायित्व ग्रहण करने की एक वर्ष की अवधि में ही यशवंतराव खाद्य और पूर्ति सम्बंधित अपनी नई नीति घोषित करने में सफल हुए। १९५२ की दिसम्बर २ के संवाददाता-संमेलन में उन्होंने कहा : "केन्द्रीय सरकारने राज्यीय सरकारों से विचार-विनिमय कर निर्णय

किया है कि अंतर्देशीय नियंत्रणों को कायम रखते हुए भी किसी भी राज्यीय सरकार को अन्य राज्यीय सरकारसे अनाज खरीदी करने की अनुज्ञा (छूट) रहेगी। ठीक वैसे ही केन्द्रीय सरकार की नीति से सुव्यवस्थित सम्बंध बनाये रख कर राज्यीय सरकार अपने क्षेत्रमें अंशतः प्रमाणमें नियंत्रण उठा सकती है। तदनुसार बम्बई सरकारने ३० हजार की आबादीवाले छोटे छोटे शहरों तथा गाँवों से बाजरी, मक्कई, ज्वारी आदि अनाज पर से हर प्रकार के नियंत्रण उठाने का निर्णय किया है। यह नीति आम जनता के लाभार्थ कार्यान्वित करने का निर्णय सरकारने लिया है। ठीक वैसे ही अनाज की कीमत में यकायक वृद्धि न होजाय और नियंत्रण के जमाने से भी अधिक कठिनाइयोंका सामना जनता को न करना पडे। अतः सरकार पूर्ण रूप से सजग है। नियंत्रण के कारण ग्रामीण जनता की जो दुर्दशा हो रही थी उस मुसीबत से छुडाने के लिये ही यशवंतराव ने खाद्यविषयक नई नीति अंगिकार की थी। अपनी नई नीति से सम्बंधित रेडियो प्रवचन में उन्होंने धान्योत्पादक एवं व्यापारीवर्ग से हार्दिक अपील की थी: "हम जिस नई नीति का अवलम्बन कर रहे हैं उसका सारा आधार धान्योत्पादक कृषक-वर्ग एवं व्यापारी वर्ग की राष्ट्रीय सद्भावनाओं पर सर्वस्वी अवलम्बित है। फलतः उन्हें सरकार के साथ सक्रिय सहयोग कर अपनी देशभक्ति का ज्वलंत उदाहरण पेश करना चाहिए। ठीक वैसे ही विरोधी दलों को जरा रुक कर हमारी नई नीति का सूक्ष्मावलोकन कर सरकार पोषक वातावरण निर्माण करना चाहिए।"

तत्पश्चात् चावल को छोडकर सभी प्रकार के अनाज पर के सारे बंधन उठा दिये गये। शक्कर, वस्त्र, केरोसीन आदि दैनंदिन आवश्यक चीजों पर से भी नियंत्रण हटा दिया गया। गेहूँ का रेशनिंग भी खत्म होगया। सन् १९५२–५३ में बम्बई सरकार की धीमी गति से नियंत्रण उठाने की नीति सफल सिद्ध हुई और सभी चीजें निश्चित दर पर सरे आम मिलने लगी। यशवंतराव को अपनी नई खाद्य-नीति के बारे में कितना आत्मविश्वास था यह उनके 'पूर्तिमंत्रालय को कभी बंद करने का अवसर आ गया तो मुझे आश्चर्य न होगा।' शब्दोच्चार से ही भली भाँति प्रकट होता है और उनके शब्द सत्यमें परिवर्तित हुए जब एक वर्ष के बाद ही बम्बई सरकार को अपना पूर्तिमंत्रालय सदा के लिए बंद कर देना पडा।

पूर्ति-मंत्रालय को कुलुप लग जाने पर यशवंतराव के जिम्मे स्वायत्त शासन, जंगल एवं विकास विभाग का संयुक्त मंत्रालय दिया गया। सन् १९५४ के जुलै

में सातवे वनमहोत्सव के प्रसंग पर प्रवचन करते हुए यशवंतराव ने कहा था : "अल्पावधि पूर्व ही खाद्य-विषयक परिपूर्णता हमने जो प्राप्त की है अगर उसे राष्ट्रीय योजना में स्थायी रूप प्रदान करना है तो हमें अपनी वन-संपत्ति का जतन बडी ही सावधानी से करना होगा। हमें ऐसे वृक्ष लगाने होंगे जिनसे ईंधन भी आसानी से मिल सके। इंधन के लिए अगर लक्कडियों का उपयोग सुलभ बन जाय तो गोबर का उपयोग बन्द हो जायगा और उसका उपयोग खेती के लिए खादरूप में होगा।"

स्वायत्तशासनमंत्री के नाते यशवंतराव ने स्वायत्तशासन संस्थाओं की छोटी-छोटी परिषदें आयोजित कर अपनी समस्याएँ विचार-विनिमय द्वारा हल करने का सुझाव कार्यकर्तावर्ग को दिया। वे खुद युरूप-अमरिकी स्वायत्त संस्थाओं का गहराई से अध्ययन करनेमें लगे हुए थे। धारवाड जिले की स्वायत्तशासन संस्थाओं के प्रथमाधिवेशन में उन्होंने बताया कि, द्वितीय पंचवर्षीय योजना में स्वायत्तशासन संस्थाओं पर महद् जिम्मेदारी आने वाली है अतः उन्हें वह जिम्मेदारी वहन करने के लिए सभी दृष्टि से योग्य बनाना चाहिए। ऐसी अनेक परिषदों का आयोजन होना चाहिए, जिससे वे एक दूसरी की आवश्यकताएँ, जटिल समस्याएँ समझ कर उन्हें हल करने का सही मार्ग खोज निकाल सकेंगी। तत्पश्चात् १९ जुलै १९५८ में पूर्व और पश्चिम खानदेश जिले की म्युनिसि-पैल्टियों के अध्यक्ष, चेयरमेन एवं चीफ ऑफीसरों की परिषद में अध्यक्षपद से प्रवचन करते हुए उन्होंने कहा : "अखिल बम्बई इलाके में इस प्रकार की यह पहली ही परिषद है। अतः मेरा अनुरोध है कि आप लोग निःसंकोच वृत्तिसे मुक्त विचार-विमर्श कर नगरपालिका शासन में आवश्यक सुधारों की दृष्टि से मार्ग खोज निकालनेका प्रयास करें।" बडौदा के अधिवेशन में प्रवचन करते हुए कहा था : "प्रथम पंचवर्षीय योजनामें नगरपालिकाओं की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया लेकिन द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इन पर खास ध्यान दिया जानेवाला है। गंदी बस्तियाँ हटाना प्रत्येक नगरपालिका का आद्य कर्तव्य है लेकिन उन्हें बसने और बढने न देना उससे भी महत्त्वपूर्ण कार्य है।" अब तक स्वायत्त शासन संस्थाओं में अनेक कार्यकर्ताओं ने कार्य किया। बहुत सी अच्छी बातें की; मुश्किलियों को हल किया; संकटमें से राह निकाली—लेकिन वह सब उन कार्यकर्ताओं के व्यक्तिगत गुणों का कारण हुआ। लेकिन यशवंतरावने ऐसे कार्यकर्ता एवं अधिकारियों को संगठित हो कार्य करने का आदेश दिया।

ग्रामपंचायत यह प्रजातंत्र की नींव का पत्थर है और राज्यभर में उसका

विस्तार भी बडे पैमाने पर होने के कारण यशवंतरावने अपने सहयोगियों की सहायता से सन् १९५४ में बम्बई राज्यीय ग्राम्य पंचायत संघ की स्थापना की थी। १९५५ के अगस्त ७ को उक्त संघ के पूना में आयोजित द्वितीय अधिवेशन का उद्घाटन करते हुए यशवंतराव ने कहा था : "ग्राम्य पंचायतें केवल गाँवों की नागरी-शासन चलानेवाली यंत्रणा नहीं है बल्कि उन पर ग्राम्य-समाज के कल्याण की महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी है। पंचायत के सभ्य और अधिकारियों को निजी हित के बजाय समाजके हित को अधिक प्राधान्य देना चाहिए।"

'जंगली जीवजंतुओं का संरक्षण' विषय पर रेडिओ प्रवचन देते हुए अक्तुबर १९५६ की पहली तारिख को यशवंतरावने बताया कि, वन-प्राणियों का संरक्षण जनता के साथ विना प्रायः असंभव है। वन के प्राणी उपयुक्त कार्य कर मानव-जीवन की समृद्धि में जो योग प्रदान करते हैं—उस पर हमें गहराई से सोचना चाहिए। लोग सच नहीं मानेंगे लेकिन जंगली जीवजंतु मनुष्य के हितार्थ बहुत-कुछ करते हैं। साँप जैसा जहरीला प्राणी भी चूहें और घूस से फसल की रक्षा करता है। बाघ जंगली सूअर का शिकार करता है तभी जंगली सूअरों से फसल को पहुँचनेवाली हानि कम होती है। चित्ता बन्दर का भक्षण करता है अतः बन्दरों से फसल की रक्षा होती है। यशवंतराव ने उपरोक्त प्रवचन द्वारा 'वन-प्राणियों की रक्षा करो' नारे को मानवी-दृष्टिकोण से समझाने का प्रयत्न किया है। सहजीवन और सहअस्तित्व के तथ्य जंगली-प्राणी भी अपनाते हैं तब मनुष्य को मनुष्य का उपयोगी क्यों न बनना चाहिए?

ग्रामीण समाज को उन्नत बनाने के लिए हमें नये सिरे से प्रयत्न करने चाहिए। जब ब्रिटिश सत्ता भारत पर हावी थी तब उसने गाँवों को सुधारने की ओर ज़रा भी ध्यान नहीं दिया। लेकिन हमारे देश की आत्मा तो सात लाख गाँवों में बसी हुई है। अगर हमने अपनी आत्मा को ही उन्नत न बनाया तो फिर किया ही क्या जन्म लेकर? यशवंतराव ग्रामीण समाज को शहरी समाज से अलग रखना नहीं चाहते। ठीक वैसे ही शहरी समाज की प्रगति कुंठित करना भी नहीं चाहते। वे यह चाहते हैं कि ग्रामीण-समाज शिक्षित बन कर अपने आप को पहचाने, अपने महत्त्व को समझे। इसी प्रश्न की बारीकियों में खोते हुए उन्होंने १५ अगस्त १९५८ को बम्बई आकाशवाणी केन्द्र से बोलते हुए कहा था : "हमारे देश के सामने अगर कोई जटिल प्रश्न है तो वह यह है कि वर्तमान सामाजिक और आर्थिक ढांचे में शहरी और गाँवमें रहनेवाला भोला-भाला इन्सान बराबरी में नहीं बैठते—इन दोनों में जमीन आस्मान का अन्तर पड गया

है, जिसे रोक कर भारतीय प्रजातंत्र की दोनों शक्तियों को एक सूत्र में बांधना होगा। उनमें परस्पर सद्भावना और अपनापन निर्माण करना होगा। और यह तभी हो सकता है जब अपढ, गँवार ग्रामीण समाज को सुशिक्षित और सुसंस्कृत बनाया जाय। ग्रामीण शिक्षण अर्थात् शिक्षण क्षेत्र का कोई नया प्रकार नहीं—अगर वह शिक्षण लिया जाय तो सुशिक्षित अपने गाँव से दूर नहीं जाता बल्कि अपने गाँव की भलाई, विकास और उन्नतिमें सक्रिय भाग लेता है।"

किसी भी देश की समृद्धि, प्रगति और उन्नति के लिए प्रशासनिक-ढाँचे के प्रत्येक पहलु में सम्पर्क होना परमावश्यक है। वही राष्ट्र उन्नत बन सकता है, जहाँ सहयोग, श्रम, संपत्ति और संगठन का सुन्दर संगम हो। जनता और अधिकारी को वे प्रशासन के दो कलपुर्जे हैं जो एकत्रित आने पर ही सफलता सहज है। अगर जनता और अधिकारीवर्ग में सामंजस्य और सहयोग की भावना नहीं है तो राज्य का दैनंदिन कार्य ही ठप्प हो जाएगा। इस बात का जिक्र करते हुए उन्होंने ३ सितम्बर १९५७ को बम्बई राज्यीय जिल्हाधिकारियों के सम्मेलन में कहा था कि सरकारी अधिकारी—ये जनता के सेवक हैं; लेकिन वे जनता के बजाय सरकार के प्रति निष्ठावान हैं। अधिकारियों को जनता की सेवा, सरकारी कार्यक्रम के अनुसार करनी पडती है जबकि जनता पर ऐसा कोई बन्धन नहीं होता।" सरकारी अधिकारियों को प्रायः ऐसी नीति अंगिकार करनी चाहिए, जिससे वे आसानी से आम-जनता के साथ हिलमिल सके। उन्हें अपने बर्ताव और व्यवहार से यह सिद्ध कर दिखाना चाहिए कि वे भी उनकी सहायता कर सकते हैं। जनता जब निःसंकोच ही किसी अधिकारी के समक्ष अपनी बात रखने में समर्थ बन जाय तब उसे योग्य अधिकारी माना जा सकता है। अधिकारियों को जनसाधारण में यह आस्था निर्माण करनी चाहिए कि सरकार को वे अपनी मानने लगे और अधिकारी-वर्ग से दूर न रह, उनके कार्य में हर तरह की मदद और योग देने के लिए प्रस्तुत हो जाय। इसी बातका प्रतिपादन करते हुए एक बार उन्होंने कहा था कि मुझे न्याय मिलेगा यह भावना मनुष्य के मनमें रूढ करने की जिम्मेदारी सरकार की यानी सरकारी अधिकारियों की है। अधिकारी-वर्ग गलत राह पर जा रहा है या हमें न्याय से वंचित किया जा रहा है यह स्पष्टतौर से कहने का साहस आम-जनता में होना चाहिये और यह साहस अधिकारी-वर्ग को ही अपनी निस्पृहवृत्ति और न्याय-नीति से जनता में पैदा करना चाहिए। किसी भी देश के प्रशासन की कसौटी आम जनता के संतोष, सुख और समृद्धि में निहित है।

यशवंतराव भारत के सात लाख गाँवों की तरह ही एक सामान्य गाँवमें जन्मे हैं, पले हैं और बड़े हुए हैं। इनका शैशव गाँव की गली और मुहल्लों में गुजरा है। वे गाँव की गन्दगी और विषमता के हर पहलु से परिचित हैं। गाँव में व्याप्त बेकारी, गरीबी, बुरे रीति-रिवाज और झूठी कल्पनाओं से ग्रस्त इन्सान की टूटती साँस की वेदना से वे भली-भाँति जानकार हैं। और तभी स्वतंत्र भारत की रीढ सम गाँवों की सुन्दर कल्पना वर्षों से अपने मनके किसी कोने में संजोये हुए हैं। उन्होंने 'मेरा कल्पित गाँव' विषय को ले पूना आकाशवाणी केन्द्र से प्रवचन करते हुए कहा था कि मेरा कल्पित गाँव अर्थात् कभी किसी काल में लोग खेती-बाडी करने लगे और उसके इर्द-गिर्द छोटी छोटी झोपडियाँ बना रहने लगे—वह गाँव नहीं; अथवा झरने की मधुर स्वरलहरियों का आनन्दानुभव करता और मृदुकंठिनी श्यामा के मधुरालाप का रसास्वादन करता कुंज-निकुंज में घूम-घूम कर नित नई कल्पनाओं का सर्जक कवि कल्पना करता है ऐसा गाँव नहीं; बल्कि राष्ट्र के जीवन में अपना स्थान स्थिर करनेवाला, सदैव विकास की ओर अभिमुख, एक छोर से दूसरे छोर तक जहां जीवन की धमनियाँ गतिमान हैं और जो अपनी उत्पादनक्षमता से आस-पास के प्रदेश का आकर्षण-केंद्र बन गया है—ऐसा वर्धिष्णु गाँव ही मेरी कल्पना में बसा मनोरम गाँव है।

जिस गाँव का समाज उत्पादक-भावना लिये एक जगह आया है और जिसकी कार्यक्षमता और उत्पादन-कार्य उक्त गाँवकी सारी आवश्यकताएँ पूरी करने में समर्थ है, ऐसा गाँव ही सुन्दर गाँव कहला सकता है। जिस गाँव का समाज अपनी हर समस्या, अपनेपन और समझौतावादी वृत्ति से हल करने के लिए एकत्रित बैठ कर योग्य निर्णय लेता है—ऐसा पंचायती-जीवन जीनेवाला गाँव...! यह है दूसरा गाँव जिसकी स्पष्ट कल्पना मेरे मानस पर अंकित है!

पारस्परिक वैर-वैमनस्य की भावना की शिकार, गरीबी और कंगालियन से निराश बना, हमारे पर सतत अन्याय हो रहा है ऐसी शंका से ग्रस्त हो, प्रत्येक की ओर देखनेवाला गाँव बसाने की बजाय हमें परस्पर की सौहार्दता और सौजन्यता का प्रतीक हर मुश्किलियों में कंधे से कंधा भिडाकर आँधी-पानी तूफान में जुझ सके ऐसा गाँव बसाना चाहिए।

११ : संयुक्त महाराष्ट्र की समस्या

गुलामी की जंजीरों से मुक्त होने के लिए भारतीय जनता अधीर हो उठी। फलतः देश में राष्ट्रीय काँग्रेस की स्थापना हुई। क्रांतिकारी तरीकों से देश को आज़ाद कराने की योजनाएँ बनीं। आंग्ल-विद्या-प्रेमियों द्वारा प्रस्थापित काँग्रेस ने उन्नीसवीं सदी में राष्ट्रीय स्वरूप धारण करना शुरू किया। लोकमान्य तिलक, न्यायमूर्ति रानडे, गोपाल कृष्ण गोखले, दादाभाई नवरोजी, विठ्ठलभाई पटेल, पंडित मोतीलाल नेहरू, लाला लजपतराय आदि राष्ट्रीय नेताओंने देश को स्वाधीन बनाने के हेतु विभिन्न कार्यक्रम बनाये। महात्मा गांधी का दक्षिण आफ्रिका से भारतमें आगमन हुआ। उन्होंने देश की आज़ादी के हेतु अहिंसा, सत्य, विदेशी वस्त्रों का परित्याग, चर्खा, हरिजनोद्धार जैसे कार्यक्रम दिये। उनमें मातृभाषा प्रचार का कार्यक्रम प्रमुख था। उन्होंने बताया कि भारत की जनता अनपढ है। गरीबी और कंगालियत में सड रही है। उसे अगर देश की आजादी के लिए तैयार करना है तो उसकी भाषा में हमें बोलना होगा। उसके बीचमें जाकर रहना होगा। उसके दुःख-सुख से समरस होना होगा। इन तत्वों की प्राथमिक तैयारी के लिए हर प्रांत में काँग्रेस की शाखाएँ खोलीं। भाषानुसार प्रांत रचना का पुरस्कार किया। उसने आम जनता को बताया कि देश को स्वाधीनता मिलने पर भाषानुरूप विभिन्न राज्यों की स्थापना की जाएगी। इस तरह स्वाधीनता-संग्राम को गति प्रदान करने के हेतु राष्ट्रीय काँग्रेस ने भाषाई प्रांतों की योजना मान्य की।

सन् १९४९ के जून में 'धार कमिशन' की नियुक्ति की गई, जिसने बम्बई राज्यसे सम्बन्धित प्रत्येक प्रश्न का सूक्ष्मावलोकन कर बम्बई शहर बहुविध संस्कृति का केन्द्र होने के कारण संयुक्त महाराष्ट्र में इसका समावेश नहीं होना चाहिए ऐसा निर्णय दिया। तत्पश्चात् १९४९ के दिसम्बर में जयपुर में संपन्न काँग्रेसने 'जवाहर-वल्लभभाई-पट्टाभि सीतारामैया समिति' की नियुक्ति की। उपरोक्त समितिने भी धार समिति जैसा ही निर्णय घोषित किया। उनकी माँग भी पुरानी थी और ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित। अतः महाराष्ट्र के नेताओं को खाना अंग नहीं लग रहा था। फिर भी दोनों की मनीषा थी कि परस्पर समझौते द्वारा। एक हो कर माँग रखी जाय तो सफल होने की अंशतः संभावना अवश्य है। तदनुसार २९ सितम्बर १९५३ को नागपुर में विदर्भ एवं महाराष्ट्र के अग्रगण्य

नेताओं का एक सम्मेलन सम्पन्न हो कर 'नागपुर करार' का जन्म हुआ। नागपुर करार के द्वारा महाराष्ट्र के नेताओंने विदर्भ को कुछ विशेष रियायतें देना मान्य किया था। इस ऐतिहासिक नागपुर-करार पर महाराष्ट्र का प्रतिनिधित्व करते हुए यशवंतराव ने हस्ताक्षर किये थे।

उस समय महाराष्ट्र के दिग्गज नेता श्री शंकरराव देव अखिल भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के महामंत्री थे और देश का सबसे बडे दल काँग्रेस के हाथ में शासन की बागडोर थी। फलतः संयुक्त महाराष्ट्र परिषद की स्थापना में विरोधी से बढ कर काँग्रेस-कार्यकर्ताओं का हाथ था। काँग्रेस की ओर से अन्य कार्यकर्ताओं के साथ श्री शंकरराव देव, पंजाब के वर्तमान राज्यपाल काकासाहब गाडगील, भाऊसाहेब हिरे, डॉ. टी. आर. नरवणे और यशवंतराव आदि मुख्य थे।

काँग्रेस के हैदराबाद अधिवेशन में भाषाई प्रांत रचना से सम्बंधित एक प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे वारित किया गया, जिसे श्री काकासाहब गाडगीलने रखा था। उस पर एक उपसूचना सुझाते हुए यशवंतरावने भाषाई प्रश्न को लेकर पैदा होनेवाले भावी खतरे की ओर इंगित करते हुए इस समस्या को यों ही खटाई में न डाल कर, शीघ्रातिशीघ्र इसका निपटारा करने का साग्रह अनुरोध किया था। उनकी यह दृढ मान्यता थी कि भाषाई-समस्या की वास्तविकता को समझ कर उसे बुद्धिपूर्वक हल करने से किसी प्रकार की कटुता और वैर-वैमनस्य की भावना पैदा न होगी बल्कि एक जटिल समस्या समझौतावादी रूख से आसानी से हल होजायगी। उन्होंने अपना यह मनोगत भारत सरकार के तत्कालीन खाद्यमंत्री स्वर्गीय रफी साहब के समक्ष प्रकट भी किया था।

सन् १९५२ के निर्वाचन-घोषणा पत्र के जरिये काँग्रेस ने भाषानुसार राज्य-रचना का आश्वासन दिया था। तदनुसार सन् १९५३ के दिसम्बर में भारत सरकार ने एक त्रिसदस्यीय 'राज्यपुनर्गठन आयोग' के गठन की घोषणा की। आयोग के श्री फाजलअल्ली अध्यक्ष और पंडित हृदयनाथ कुंजरू तथा सरकार पण्णीकर सदस्य थे। आयोग का कार्य देश भर में दौरा कर वास्तविक परिस्थिति का मूल्यांकन कर भाषाई राज्य-रचनाविषयक सरकार को विवरण प्रस्तुत करना था। प्रत्येक प्रांत की भौगोलिक, ऐतिहासिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पार्श्वभूमि पर साधक-बाधक चर्चाएँ हुईं। संयुक्त महाराष्ट्र परिषदने अनेक तथ्य, प्रमाण एवं अकाट्य दलीलों के साथ बम्बई विदर्भ-मराठवाडा सह संयुक्त महाराष्ट्र की माँग रखी। लेकिन फाजलअल्ली आयोग का प्रतिवेदन प्रकाशित होने पर उनकी बौखलाहट और रोष का पारावार न रहा। आयोग ने एकभाषी राज्योंका

समर्थन किया था। स्वतंत्र विदर्भ की माँग भी मान्य रखी थी। पर गुजरात महाराष्ट्र के स्वतंत्र राज्य की आशा पर तुषारापात किया था। बम्बई को राजधानी बना कर गुजरात और महाराष्ट्र को संतुलित द्विभाषिक की भेंट दी गई थी।

फाजलअल्ली आयोग के प्रतिवेदन पर अपना मत व्यक्त करते हुए यशवंतरावने भारपूर्वक बताया कि बम्बई सह संयुक्त महाराष्ट्र की माँग समस्त महाराष्ट्र के साढे तीन करोड महाराष्ट्रीयनों की अधिकृत माँग है। उक्त माँग को फाजलअल्ली आयोगने बगल देकर जो अन्याय किया है—उसके कारण निखिल महाराष्ट्र में निराशा और असमाधान की भावना जागना—पैदा होना स्वाभाविक है।

राज्य-पुनर्गठन आयोग का प्रतिवेदन प्रकाशित होने के बाद महाराष्ट्र की परिस्थिति दिन-ब-दिन बिगडने लगी। पहले ही अपनी संयुक्त महाराष्ट्र की योग्य माँग को ठुकराने के कारण जनता में वैफल्य की भावना निर्माण होगई थी। महाराष्ट्रीय मनों में सरकार द्वारा किये गये अन्याय के प्रति असंतोष की दबी आग धीरे धीरे सुलग रही थी। इस अवसर पर भूदान कार्यकर्ता श्री शंकरराव देवने कहा : "राज्य-पुनर्गठन आयोग के सुझावों से किंचित् भी विचलित न होते हुए संयमी वृत्ति से हमें अपने संयुक्त महाराष्ट्र के ध्येय को साध्य करने हेतु आवश्यकता हुई तो शांतिमय आत्मक्लेष का मार्ग अपनाने के लिए तैयार रहना पडेगा।" उन्होंने संयुक्त महाराष्ट्र परिषद की कार्यसमिति में बताया कि फाजलअल्ली आयोग ने संयुक्त महाराष्ट्र के सुहाने स्वप्न को ही नष्ट कर दिया है। हमें अपना ध्येय साध्य करने के लिए केवल वाणी नहीं बल्कि कृति से काम लेना होगा। जनतंत्रीय पद्धति का अवलम्बन कर हमें यह आन्दोलन उठाना होगा।

देश के अशांत वातावरण से काँग्रेस-श्रेष्ठि वर्ग चिंतित हो उठा। और उसने १४ अक्तूबर को काँग्रेस कार्य-समिति में एक प्रस्ताव पारित कर देश के समस्त काँग्रेसजनों को आदेश दिया कि राज्य-पुनर्गठन आयोग के प्रतिवेदन के कारण देश में मची खलबली में काँग्रेस कार्यकर्ता किसी प्रकारका सहयोग प्रदान न करे। अपनी प्रादेशिक माँगों की पूर्ति के हेतु अन्य दलों से हाथ न मिलाएँ। और इधर महाराष्ट्रीय नेताओं को संतुलित द्विभाषिक के कारण हुई आशाभंग से क्लान्त न होकर राष्ट्रीय ऐक्य टिकाने का समझाने के लिए दिल्ली बुलाया गया। दिल्ली जानेवाले महाराष्ट्र काँग्रेस के शिष्टमंडल में श्री शंकरराव देव, काकासाहब गाडगील, भाऊसाहब हिरे, कुंटे और हमारे चरित्रनायक का समावेश किया गया था।

२१ अक्तूबर को महाराष्ट्र प्रदेश की सामान्य सभा में सर्वसम्मति से पारित हुआ। संयुक्त महाराष्ट्र के इन्कार की पीडा अभी भी यशवंतराव को पीड रही थी। विशाल द्विभाषिक का समर्थन करते हुए भी यशवंतराव की संयुक्त महाराष्ट्र की निष्ठा कायम थी। "महाराष्ट्र की न्यायी माँग को ठुकराना उसका उपमर्द करना है। बम्बई सह संयुक्त महाराष्ट्र की माँग का अस्वीकार यह भारतने विदेशी उपनिवेशवाद को नष्ट कर दिया है फिर भी देशी उपनिवेशवाद को खत्म करने में वह असमर्थ सिद्ध हुआ है इसका ज्वलंत उदाहरण हमें अपने मूलभूत अधिकार के लिए प्रदीर्घ काल तक मोर्चा लेना होगा। हमारी मंझील अभी बहुत दूर है। फिर भी मैं इस प्रस्ताव का इसलिए समर्थन कर रहा हूँ कि वर्तमान स्थिति में यही योग्य है। और इसकी कल्पना हमारे दिग्गज नेता श्री शंकरराव देव की गांधीवादी विचार-धारा से सुसंगत है।"

महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेस समिति ने एक प्रस्ताव मान्य कर काँग्रेस कार्य समिति को अपने पिछले प्रस्ताव पर पुनर्विचार करने का अनुरोध किया। उक्त प्रस्ताव का समर्थन करते हुए यशवंतरावने बताया कि संयुक्त महाराष्ट्र की ओर केवल सैद्धांतिक-दृष्टिकोण से न देखते हुए उसके हर पहलु पर सूक्ष्मता से विचार करना चाहिए। जिन सिद्धांतों के लिए आज काँग्रेस जुझती आ रही है उन्हीं सिद्धांतों का अनुशरण कर हमें दल-निष्ठा के चौखटे में बने रह कर अपना आन्दोलन चलाना है और संयुक्त महाराष्ट्र का स्वप्न साकार करना है। हमें ऐसा कोई कार्य नहीं करना है जिससे राष्ट्रीय एकता, दृढता और सामर्थ्य को धोका पहुँचता हों। काँग्रेस श्रेष्ठि वर्ग की 'त्रिराज्य योजना' से संयुक्त महाराष्ट्र की हमारी माँग को बल मिला है और हम अपनी मंझील के और नजदीक आगये हैं। अब हमें उसे पूर्ण करने के लिए योग्य वातावरण की निर्मिति और विरोधियोंका हृदय परिवर्तन की दिशा की ओर प्रयाण करना है। अतः आन्दोलन, निर्देशन और हडताल जैसे कार्यक्रम के लिए हमारी योजना में कोई स्थान नहीं है और इस बात को काँग्रेसजन भली-भाँति समझ लें तभी हमारी विजय है।"

२० नवम्बर की श्री मोरारजी देसाई की चौपाटी की आम सभा में संयुक्त महाराष्ट्रवादियों ने मन का तोल छोड दिया। काफी हुल्लडबाजी और पत्थरफेंक हुई। अशांत जनताने २१ नवम्बर को पुनः विधान सभा के द्वार पर निर्देशन करने का निश्चय किया था। इधर महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेसने बम्बई विधायिका

यशवंतराव खुद संतुलित द्विभाषिक के कट्टर विरोधी और संयुक्त महाराष्ट्र के प्रखर हिमायती थे। फाजल अल्ली आयोग के सुझावों से वे भी सख्त नाराज थे। पर दिल्ली-वार्ता के लिए जाने के पहले उन्होंने कहीं प्रक्षोभक भाषण या चर्चा न की। महाराष्ट्र प्रादेशिक कार्यकर्ताओं के साथ इस प्रश्नको लेकर प्रायः विचार-विनिमय होता ही रहता था। अतः वे उनके विचारों को आत्मसात् कर सके थे। लेकिन अपने मतदार संघ के कार्यकर्ताओं के विचार जानने के लिए और एकाध नई नीति का अवलम्बन करने का अवसर आजाय तो उनका साथ चिरस्थायी बन जाय इस हेतु से उन्होंने कराड के शिवाजी विद्यामंदिर में सातारा जिला, कराड तहसील एवं कराड के २५-३० निमंत्रित कार्यकर्ताओं की एक बैठक बुलाई। हालाँकि बैठक निजी तौर की थी लेकिन उसमें संयुक्त महाराष्ट्र से सम्बंधित हर पहलु पर साधक-बाधक चर्चा कर अपने विचार व्यक्त करने की प्रत्येक कार्यकर्ता को छूट थी। यशवंतरावने विषय का विशद विवेचन करते हुए अपनी नीति सबके सामने रखी और बाद में उपस्थित सभी कार्यकर्ताओं के विचार शांतिसे सुने। चार-पाँच कार्यकर्ताओं को छोड दे तो सभी का रुख माँग-पूर्ति के लिए शांतिमय आन्दोलन की ओर था। तब यशवंतराव ने आन्दोलन की परिधि की चर्चा करते हुए प्रजातंत्र के जमाने में अपनी बात की पूर्ति के लिए कितनी हद तक जाया जा सकता है—इसका स्पष्टीकरण किया। और प्रजातांत्रिक सर्वोच्च सत्ता भारतीय संसद जब तक कोई ठोस निर्णय न ले, संयुक्त महाराष्ट्र का पुरस्कार करने का और बादमें संसद का निर्णय एक मत से शिरोधार्य करने का निर्णय कर दिल्ली वार्ता के लिए गमन किया।

दिल्लीमें १७, १८, १९ अक्तूबर १९५५ लगातार तीन दिन तक काँग्रेस श्रेष्ठि-वर्ग और महाराष्ट्र काँग्रेस प्रतिनिधि मंडल में राज्य पुनर्गठन के प्रश्न को लेकर वार्ता जारी रही। लेकिन कोई निश्चित निर्णय नहीं हो रहा था। काँग्रेस श्रेष्ठिवर्गने काफी सोच विचार के अंत में 'त्रि-राज्य योजना' विचारार्थ प्रस्तुत की। इससे तो प्रतिनिधि मंडल की रही-सही आशा भी जाती रही। क्योंकि उनकी नीति अंत तक संयुक्त महाराष्ट्र के प्रश्न पर अडिग रहने की थी। कोई रास्ता नजर नहीं आ रहा था ऐसे प्रसंग पर श्री शंकरराव देवने अपने सहयोगियों को बताया कि वे आज विशाल द्विभाषिक की योजना रखनेवाले हैं। यशवंतराव को श्री देव की योजना कतइ पसंद न आई। उन्होंने प्रतिनिधि-मंडल के साथ जाने से ही इन्कार कर दिया। लेकिन अन्य सहयोगियों के अत्यधिक दबाव डालने पर गये। तत्पश्चात् विशाल द्विभाषिक का वही प्रस्ताव

काँग्रेस दल के सदस्यों से त्यागपत्र लेने का अभियान शुरू कर दिया। उस समय विधान सभा में ९४ और विधान परिषद में १७ सदस्य महाराष्ट्र से निर्वाचित थे। सभीने अपने त्याग-पत्र महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेस के हवाले कर दिये। त्यागपत्र अभियान के पीछे श्री शंकरराव देव की प्रेरणा काम कर रही थी और भाऊसाहब हिरे की कर्तृत्वशक्ति। हालाँकि दल का ऐसा कोई स्पष्ट निर्देश और अधिकृत प्रस्ताव न था। अतः यशवंतराव ने त्यागपत्र देने से इन्कार करते हुए स्पष्ट शब्दों में घोषित किया कि इस समय त्यागपत्र देने का अर्थ होगा वर्तमान उलझी हुई परिस्थिति से हम डर गये हैं। इससे हमारी ध्येय-पूर्ति न होगी बल्कि अराजकता और अशांति को ही प्रोत्साहन देना होगा। साथ ही महाराष्ट्र प्रदेश का ऐसा कोई प्रस्ताव और आदेश भी नहीं है। अगर हां, महाराष्ट्र काँग्रेस को विचार-विनिमय के लिए जरा भी समय न हो और प्रदेशाध्यक्ष को जल्दी हो तो वे लिखित आदेश दें, मैं किसी भी समय त्यागपत्र देने के लिए प्रस्तुत हूँ। यशवंतराव की स्पष्टवादिता से प्रभावित हो कर चौबीस घंटे के भीतर ही प्रदेशाध्यक्ष ने त्यागपत्र-अभियान बंद करवा दिया। उलझी समस्या को सुलझाने के लिए वैचारिक आदान-प्रदान करने का और समय मिले इस आशय से बम्बई विधान सभा में मुख्य मंत्री श्री मोरारजी देसाई द्वारा प्रस्तुत 'त्रिराज्य योजना' पर होनेवाली चर्चा अनिश्चित समय तक स्थगित रखने की उपसूचना पेश करते हुए श्री भाऊसाहब हिरे ने कहा : "महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेस द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव का सम्बंधित लोग सखोल अभ्यास कर, तत्कालीन परिस्थिति का आकलन करने में सफल हो सकें—इसके लिए पर्याप्त समय की आवश्यकता है और इस आवश्यकता को महसूस करते हुए त्रिराज्य योजना की चर्चा अनिश्चित समय स्थगित रखें—ऐसी मैं सभागृह से प्रार्थना करूँगा। लेकिन कोई यह न समझ लें कि प्रस्तुत स्थगन प्रस्ताव पेश करने का मतलब हम अशांति और अराजकता भरे वातावरण से डर गये हैं। महाराष्ट्र से निर्वाचित सभी काँग्रेस विधायक काँग्रेस के अनन्य सेवक हैं और मरते दम तक अपनी काँग्रेस निष्ठा टिकाये रखेंगे।"

संयुक्त महाराष्ट्र की माँग के आडमें विरोधी दल अपना शिकार खेलना चाहते थे। उसमें भी साम्यवादी दल विशेष रूपसे प्रयत्नशील था। वह हडताल, निर्देशन, और जन-मोर्चों के सहारे अपना उल्लु सीधा करनेमें अन्य दलोंके साथ जुटा हुआ था। और इधर शंकरराव देव आत्मक्लेष का मार्ग को अपना कर सत्याग्रह का अवलम्बन कर, निर्देशन और त्यागपत्रों को साधन बना संयुक्त महाराष्ट्र का

स्वप्न साकार करना चाहते थे। देश के हालात देखते हुए काँग्रेस की नीति से इनके मार्ग भिन्न थे; अतः यशवंतराव इन दोनोंही नीतियोंसे असंतुष्ट थे। वे वामपक्षियों से मोर्चा लेने में आगेपीछे हटनेवाले न थे। लेकिन शंकरराव जैसे दिग्गज नेता का विरोध कैसे किया जाय? और अगर विरोध न करें तो महाराष्ट्र में काँग्रेस-दल का भविष्य अंधकारमय बनने जा रहा था। अतः १ दिसम्बर १९५५ को फलटण में सातारा जिला काँग्रेस की होनेवाली सभा के एक सप्ताह पूर्व यशवंतरावने श्री शंकरराव देव को पत्र लिखकर अनुरोध किया कि अगर आप त्यागपत्र, भूख हड़ताल आदि की बातें करते हों तो काँग्रेस के नाम पर न करें। क्योंकि यशवंतराव की दृढ मान्यता थी कि हडताल, त्यागपत्र और निर्देशन संयुक्त महाराष्ट्र प्राप्त करनेके सही मार्ग नहीं हैं। बल्कि इन तरीकों का अवलम्बन करने से राष्ट्रीय ऐक्य भंग होने के साथ साथ संयुक्त महाराष्ट्र की आशा भी धुमिल होते देर न लगेगी। इस प्रकार का एक प्रस्ताव फलटण में पारित करवा कर उन्होंने अपनी नीति का पुनरुच्चार किया। फलटण-प्रस्ताव ने महाराष्ट्र काँग्रेस तथा विरोधी दलों में अणुबम गिरने जैसी स्थिति पैदा कर दी। अखबारवालों ने इसी प्रश्न को लेकर तिल का ताड बना लिया। उन पर नाना प्रकार के आक्षेप किये गये। बम्बई के कुछ अखबारोंने यशवंतराव को विश्वासघाती सिद्ध करने का जोरदार प्रयत्न किया। पर वे अपनी नीतिसे ज़रा भी विचलित न हुए। फलटण में घोषित नीतिका विशद विवेचन करते हुए यशवंतरावने पी. टी. आय. के संवाददाता को एक भेंट में बताया कि बम्बई के मसले पर अखिल भारतीय काँग्रेस जो नीति अपनायेगी और अंतिम निर्णय लेगी उसे मैं शिरोधार्य करूँगा। अगर कोई मेरे सामने पंडित नेहरू और संयुक्त महाराष्ट्र को खडा कर दोनों में से किसी एक को चुनने का कहे तो मैं निःसंदेह पंडित नेहरू को ही चुनूँगा। क्योंकि पंडित नेहरू हमारे देश की आत्मा हैं। वे हमारी समता, शील, शक्ति और राष्ट्रीय ऐक्य के ज्वलंत प्रतीक, हमें आज़ादी दिलानेवाले राष्ट्रपिता पूज्य बापू के महान् उत्तराधिकारी और दीन-दुखियों के अनन्य सेवक हैं! उन्होंने नेहरूजी के नाम पर जो निष्ठा व्यक्त की थी वह व्यक्ति नेहरू के प्रति नहीं बल्कि नेहरूजी की राजकीय विचारधारा के प्रति की थी। नेहरूजी का नाम तो महज अनपढ जनता को समझाने के लिये लिया था। शेष वह निष्ठा नेहरूजी की प्रजातंत्रीय प्रणाली के प्रति थी। और ऐसी ही निष्ठा एक बार शंकरराव देव ने भी व्यक्त की : "संयुक्त महाराष्ट्र के लिए मैं कदापि नहीं लड़ूँगा। क्योंकि अगर मैं लड़ूँगा तो मुझे पंडित नेहरू से हाथ धोने पड़ेंगे।

मैं संयुक्त महाराष्ट्र को स्वेच्छया त्याग दूँगा पर पंडित नेहरू को किसी भी मूल्य पर हाथ से जाने न दूँगा।"

श्री शंकरराव देव द्वारा पुरस्कृत विशाल द्विभाषिक, फाजलअली आयोग का संतुलित द्विभाषिक एवं काँग्रेस श्रेष्ठि वर्ग की त्रिराज्य योजना इन तीनों पर्यायों में से यशवंतरावको एक भी पर्याय पसंद न था। लेकिन वर्तमान परिस्थिति का आकलन करते हुए और संयुक्त महाराष्ट्र की ध्येय पूर्ति का निकटस्थ साधन समझकर उन्होंने त्रिराज्य योजना का निःसंदिग्ध समर्थन करनेका निश्चय किया। तदनुसार बम्बई विधान सभा में श्री मोरारजी देसाई द्वारा प्रस्तुत 'त्रि-राज्य रचना' विधेयक से सहमत बनें।

७ जनवरी १९५६ के दिन दिल्ली में भारत के विधि मंत्री श्री हरिभाऊ पाटसकर के बंगले पर आयोजित खासदारों की बैठकने प्रदीर्घ विचार-विनिमय के बाद राज्य पुनर्गठन आयोग की संतुलित द्विभाषिक योजना के बजाय त्रिराज्य योजना को ही अधिक श्रेयस्कर और सर्व दृष्टि से योग्य समझा। इस तरह यशवंतराव की नीति का सभीने खुलकर समर्थन किया। समग्र परिस्थिति का योग्य मूल्यमापन करते हुए काँग्रेस श्रेष्ठिवर्गने महाराष्ट्र काँग्रेस से और अधिक सलाह-मशविरा करने की आवश्यकता महसूस की। तदनुसार समझौता-वार्ता के समय महाराष्ट्र काँग्रेस के नेताओंने त्रिराज्य योजना में जरा बदल सुझा कर बम्बई शहर की एक अलग इकाई करने के बजाय बम्बई को केंद्रशासित करने की तथा उसे प्रधानमंत्री पंडित नेहरू की सम्मति से महाराष्ट्र में मिलाने की योजना रखी। लेझिन बम्बई की महत्त्वपूर्ण समस्या को अधिक काल तक स्थगित रख कर तनावपूर्ण वातावरण बनाये रखना पंडितजीने उचित न समझा। परिणाम स्वरूप बम्बई को केंद्रशासित इकाई बनाने का निर्णय कर भारत सरकारने १६ जनवरी ५६ के दिन तत्संबंधी घोषणा की।

केन्द्र सरकारकी बम्बई शहर केंद्रशासित करने की घोषणा सुन कर संयुक्त महाराष्ट्र समर्थक जनता उबल पडी। दूसरे दिन विरोधियोंने प्रचंड निर्देशन किये। सारी बम्बईका व्यवहार ठप्प हो गया। सख्त हडताल हुई। सरकारी संपत्ति की तोड-फोड की गई। राष्ट्रीय नेताओं की सरे आम अर्थियाँ निकाल कर सार्वजनिक रूप से दाह-संस्कार किये गये। लूँट-फाँट की अनेक वारदातें हुई। पुलिस द्वारा कर्फ्यु जारी करने पर भी क्रोधित जनता अपनी हरकतों से बाज न आई। सारा शहर अशांति और अराजकता के लोहकवच से ढँक गया। गुंडागिरी ने सीमोल्लंघन कर दिया। इसमें वास्तविक अपराधियों के बजाय निर्दोषों को ही काफी सहन करना पडा।

इधर महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेस की १८ जनवरी १९५६ की सामान्य सभा में काँग्रेस विधायकों के त्याग पत्र का प्रश्न लेकर अच्छी खासी खडाजंगी हुई। श्री काकासाहब गाडगील और श्री हिरे त्यागपत्र देने के पक्ष में थे ताकि काँग्रेस श्रेष्ठि वर्ग अपने निर्णय का पुनर्विचार करने के लिए बाध्य होवे—यह उनकी आंतरिक इच्छा थी; जब कि त्यागपत्र से संयुक्त महाराष्ट्र का प्रश्न हल न होगा बल्कि महाराष्ट्रीय जनता के बारे में अन्य लोगों में भ्रम पैदा हो जायगा यह यशवंतराव की मान्यता थी। फिर भी दल की एकता को अंत तक टिकाये रखने के लिये उन्हें विवश होकर श्री मोरारजी देसाई के पास अपना मंत्रीपद का त्यागपत्र देना पडा। केन्द्रीय मंत्री श्री देशमुख और श्री पाटसकर ने भी त्यागपत्र दिये। लेकिन बम्बई राज्य के श्री तपासे और नायक-निम्बाल्कर मंत्रीद्वय ने अपने स्थानसे त्यागपत्र न देकर दल का आदेशभंग किया। काँग्रेस कार्य-समितिने अपने २३ जनवरी के प्रस्तावानुसार त्यागपत्र वापस लेने की अपील की। उस पर विचार करने के लिए महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेस की सामान्य सभा पूना में २८ जनवरी को हुई। इस बैठक के अनुसार संयुक्त महाराष्ट्र परिषद की कार्यसमिति पर रहे समस्त काँग्रेसियों को त्यागपत्र देने का आदेश दिया गया। इसी समय श्री शंकरराव देवने पूना से एक विज्ञप्ति निकाल कर संयुक्त महाराष्ट्र परिषद विसर्जित करने की घोषणा की। साथ ही उन्होंने सांगली में भाषण करते हुए यशवंतराव की नीति का पूर्णरूप से समर्थन किया।

भाषाई प्रश्न को लेकर जनता ने अपनी मुक्तिदाता काँग्रेस से ही विद्रोह कर दिया। जिन नेताओं को सन् बयालीस के आंदोलन में जनता सिर पर बैठा नाची थी—उन्हीं पर अंडे फेंके गये। चप्पल और पत्थर फेंक कर उन्हें अपमानित किया। उस समय यशवंतराव जहाँ जहाँ गये उनके साथ असभ्य बर्ताव किया गया। २१ मार्च के दिन पूनामें श्री भाऊसाहब हिरे विरुद्ध प्रचंड निर्देशन हुए। दूसरे दिन प्रदेशाध्यक्ष श्री देवगिरीकर को सोलापुर में कटु अनुभव आया। असंतोष की भावना मानस-पंख पर सवार होकर दावानल की तरह सर्वत्र फैल गई थी। इसमें महाराष्ट्र का कोना कोना धू–धू जल रहा था। हालँकि महाराष्ट्र काँग्रेस के वरिष्ठ नेता अपनी सभाओंमें संयुक्त महाराष्ट्र का ही जोर-शोर से प्रतिपादन कर रहे थे। पर उनका मार्ग अलग था। विरोधी-दलों के शंभु मेले का संगठित रूप संयुक्त महाराष्ट्र समिति अपने तौर-तरीकों से मतभेद रखनेवालों को बदनाम करने पर तुली हुई थी। जनतंत्र के जमाने में विरोधी विचार-धारा के प्रचारकों को भी अपना मत व्यक्त

करने का संविधान द्वारा मूलभूत अधिकार प्राप्त है। लेकिन यहाँ तो समितिवाले संयुक्त महाराष्ट्र की आडमें काँग्रेस की जड मूल से उच्छेदन करने में लगे हुए थे। ११ मार्च १९५६ के दिन पूज्य विनोबा को पुनः कहना पडा : "बेशक बम्बई पर महाराष्ट्र का अग्रहक्क है। लेकिन उसका निर्णय गुजरात पर छोड दो। इस तरह का हिंसक आन्दोलन देश के लिये अच्छा नहीं।" समिति के शंभु मेले के अग्रणी श्री एस. एम. जोशी के प्रजा-समाजवादी दल की राष्ट्रीय कार्य समिति ने महाराष्ट्र की विस्फोटक परिस्थिति का आकलन करते हुए आदेश दिया कि सत्याग्रह की कतइ आवश्यकता नहीं है। खुद श्री जयप्रकाश नारायण ने भी समिति समर्थक आन्दोलन का स्पष्ट शब्दों में निषेध किया—पर राष्ट्रीय नेताओं के आदेश की किसीने परवाह न की और दिन-ब-दिन परिस्थिति बिगडने लगी।

समिति के आन्दोलन को सबसे पहला तडाका कराडमें पडा। कराड के संयुक्त महाराष्ट्रवादी वकील-वर्ग ने स्थानीय नगरपालिका के सदस्यों से त्यागपत्र की माँग करने के हेतु जुलूस निकालनेकी योजना बनाई। इसके पूर्व नगराध्यक्ष श्री पी. डी. पाटील और यशवंतराव की प्रेतयात्रा निकाल कर नगरपालिका के प्रांगण में उसका सार्वजनिक रूपसे दहन किया था। महाराष्ट्र की सभी स्वायत्त शासन संस्थाओं के निर्वाचित सदस्यों ने अपने अपने त्यागपत्र दे दिये थे। लेकिन कराड की स्थिति इससे ठीक उलटी थी। यहाँ पर किसीने त्यागपत्र नहीं दिया था। उन पर किसी प्रकार की आँच न आने पावे-अतः कराड के नागरिकोंने 'शांतिमोर्चा' संगठित किया था। उनका नारा था 'त्यागपत्र न दो', 'अन्याय का डट कर सामना करो।' परिणाम यह आया कि जुलूस-योजना रद्द होगई।

संयुक्त महाराष्ट्र के प्रश्न पर स्वायत्तशासन संस्थाओंके प्रतिनिधियों के त्याग-पत्र देने पर रिक्त हुए स्थानों के उपचुनाव कराये जाएँ तो आनेवाले प्रतिनिधि अपने पूर्वगामियों का ही अनुशरण करेंगे और पुनः वही स्थिति पैदा होगी। इन सब झंझटों से बचने के लिए चुनाव स्थगित करने का मन ही मन निश्चय कर यशवंतरावने ३१ जुलै ५७ तक ऐसे चुनाव स्थगित करनेवाले विधेयक की टीका प्रत्युत्तर का देते हुए कहा : "विरोधी दल के सदस्यों के जितना ही मैं भी महाराष्ट्रीयन हूँ। लेकिन भेद केवल इतना है कि मैं एक बुद्धिमान हूँ महाराष्ट्रीयन हूँ। भाषाई राज्य-रचना का प्रश्न किसी प्रकार के आन्दोलन, हडताल या निर्देशनों से हल नहीं होगा बल्कि पारस्परिक स्नेह, सौहदिपूर्ण वातावरण एवं समझौतावादी वृत्ति से ही हल होगा ऐसी मेरी दृढ मान्यता है। महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेस में मैंने त्याग-पत्र प्रस्ताव का समर्थन किया था। अतः मेरे विद्वान्

मित्र श्री अमुल देसाई ने मेरी कटु आलोचना कर कुछ आरोप भी किये। लेकिन वह प्रस्ताव सरकार के साथ असहयोग करने की मनोवृत्ति से जन्मा न था; ठीक वैसे ही उसमें हमने अपने नेताओं के प्रति अविश्वास की भावना दर्शायी न थी बल्कि विश्वास ही प्रदर्शित किया था।"

अमृतसर काँग्रेसने देशकी तेजीसे बिगडती हुई परिस्थिति को ध्यानमें लेकर संस्था को भाषाई राज्यरचना का सर्वस्वी परित्याग कर बहुभाषी राज्यरचना के प्रश्न को कार्यान्वित करना चाहिए—ऐसा एक प्रस्ताव द्वारा निर्णय किया। हमारी सीमाओंपर शत्रु सेना की जमावट हो रही थी। भारतीय जनतंत्र का भविष्य अंधकारमय प्रतीत हो रहा था। सीमावर्ती प्रदेश पंजाब में साम्प्रदायिक दल अकाली पार्टी पंजाबी सूबा की रट अलग लगाये हुए थी। ऐसे प्रसंग पर राष्ट्रीय ऐक्य होना देश की आज़ादी को बनाये रखने के लिए काफी जरूरी था। इस आवश्यकता को अमृतसर काँग्रेस में उपस्थित राष्ट्र के विभिन्न भागों से आये जिन काँग्रेस-कार्यकर्ताओं ने बुरी तरह से महसूस किया, उनमें यशवंतराव भी एक थे। परिणाम स्वरूप अमृतसर काँग्रेस के पश्चात् यशवंतराव ने अपनी नीति को सार्वजनिक रूप से रखने का दृढ निश्चय किया। तदनुसार उन्होंने महाराष्ट्र को छोडकर दूसरे प्रदेश की सांगली में सर्व प्रथम 'अमृतसर काँग्रेस का संदेश' देते हुए बीस पच्चीस हजार की विशाल मैदिनी में बताया कि अगर किसी भी दलको बम्बई प्राप्त करनी हों तो जनता को महाराष्ट्र विषयक अपनी यथोचित माँग के बारेमें रही दलीलें उतारनी होंगी। उन्हें विश्वास दिलाना होगा कि हमारी माँग नीरि बकवास नहीं अपितु उसमें कुछ तथ्य है। ऐसे प्रसंग पर जो प्रयत्न कर रहे हैं—उन्हें यह कहना कि तुम लोग लौट आओ—वहाँ तुम्हारी अब जरूरत नहीं है। घरेलु समस्याएँ हल नहीं होतीं इसका अर्थ यह तो नहीं है कि घर को ही छोड दें? लोग मुझ पर अत्यधिक चिढे हुए हैं। लेकिन मेरी बात सुनने में तो कोई हर्ज नहीं। पसन्द न आएँ तो एक कान से सुन कर दूसरे कान से निकाल दो। समितिवाले मुझे महाराष्ट्र का सूर्याजी पिसाल कह कर बदनाम करते हैं। लेकिन क्या उनके कहने से संयुक्त महाराष्ट्र का उद्दिष्ट सिद्ध हो जायगा? अगर मैं सूर्याजी पिसाल हूँ तो फिर इस प्रश्नमें शिवाजी कौन है और औरंगजेब कौन? क्या काले ध्वज ले कर भोली-भाली जनता को उभाड कर होली का नारियल बनानेवाले और अवसर आने पर रणमैदानसे पीठ दिखा कर भागने वाले शिवाजी हैं? संभव है कि इनके कुप्रचार से मैं बदनाम हो जाऊँगा पर सत्य भी कभी बदनाम हुआ है? एक समय ऐसा जरूर आएगा जब मुझे

बदनाम करनेवाले ही आकर कहेंगे कि हमारा प्रचार गलत था। बम्बई सह संयुक्त महाराष्ट्र नहीं हो रहा है अतः प्रत्येक मराठी भाषी जितना दुःखी है उतना मैं भी दुःखी हूँ। लेकिन विरोधियों की चाह बम्बई को प्राप्त करने से अधिक काँग्रेस को मटियामेट करने की है। ताकि फिर पाँचों अंगुलियाँ घी में और सिर कढाई में! जबकि काँग्रेस कभी किसी दल की विरोधी नहीं रही। हम तो चाहते हैं कि जनतंत्र प्रणाली में विभिन्न विचार-धाराओं का प्रतिनिधित्व करनेवाले अलग अलग दल होने ही चाहिए। शासन-सत्ता किसी भी दल के हाथ में क्यों न हो हम तो स्वस्थ प्रजातंत्र प्रणाली के पूजारी हैं। समिति छत्रपति शिवाजी महाराज की आड लेकर अपनी गन्दी राजनीति चलाना चाहती है। लेकिन शायद उसे यह ज्ञात नहीं कि शिवाजीने विधर्मी शासक सत्ता से देश को, धर्म को, संस्कृति को बचाने हेतु लोहा लिया था। वे अपनों से कभी लडे न थे। संयुक्त महाराष्ट्र का स्वप्न रानडे, गोखले और लोकमान्य तिलक का चिरस्थायी स्वप्न है। अखिल भारतीय काँग्रेस की स्थापना, संगठन, संवर्धन और संरक्षण करनेवालों के मन में सारे देश की प्रगति और सर्वोदय करने की भावना थी साथ ही महाराष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति की भी मनीषा थी। कोई भी कट्टर संयुक्त महाराष्ट्रवादी पहले भारतीय हैं और बादमें कुछ और! मैंने बम्बई नहीं चाहिए ऐसा कभी नहीं कहा—बल्कि यह हमेशा कहता रहा कि बम्बई के लिए हडताल, निर्देशन, जुलूस और हुल्लडबाजी की जरूरत नहीं। बम्बई नहीं मिली तो क्या हम देश को ही जला देंगे, सरकारको ही उलट देंगे, भाई को ही लूटने लगेंगे। लडाई-झगडे और धाक-धमकी से बम्बई कभी नहीं मिलेगी और मिलेगी तो वह बम्बई न होगी। जिस शक्ति और निष्ठा के बल पर हमने बडी-बडी समस्याओं का सफलतापूर्वक सामना कर ध्येय-सिद्धि की है उसी तरीके से यह समस्या भी हल होगी। जहाँ अधिवेशन संपन्न हुआ वहाँ से ३०-३५ मील की दूरी पर पाकिस्तान की छावनियाँ! और महापंजाब एवं पंजाबी सूबे की माँग करनेवाले पंजाब के दो साम्प्रदायिक गुटों के प्रचंड निर्देशन! ये सब कारवाहियाँ किसी भी देशभक्त कार्यकर्ता के मन को सख्त आघात पहुँचानेवाली थी। अमृतसर काँग्रेस का वातावरण इन्हीं बातों से गूंजारित था। फलतः आज तक कभी राष्ट्रीय-ऐक्य की आवश्यकता महसूस न की हो उतनी इस समय की थी। हमारे प्रधान मंत्री खुद पंडित नेहरू ने आंचल फैला कर राष्ट्रीयएकता की अपील की थी।

यशवंतराव की नीति इतनी सरल और वैचारिक होते हुए भी विरोधी दल

संयुक्त महाराष्ट्र समिति ने इन्हें नामशेष करने में कोई कसर उठा न रखी। पूना नगर निगम द्वारा संचालित शिवाजी अखाडे में निर्मित खुले नाट्यगृह के उद्घाटन प्रसंग पर समिति समर्थकों ने काले निशानों से यशवंतराव का स्वागत किया। 'यशवंतराव मुर्दाबाद', 'सूर्याजी पिसाल लौट जाओ' आदि नारों से गगन गूंजा दिया। और जब वे वापस लौटे तब उस समय उनकी मोटर पर पत्थर तथा चप्पलों का मारा किया गया। निर्देशकों की खिल्ली उडाते हुए यशवंतरावने कहा: "नाट्यमय वातावरण में ही आज मैं नगर निगम द्वारा निर्मित खुले नाट्यगृह का उद्घाटन कर रहा हूँ।" विद्वत्ता एवं संस्कृति की केन्द्र भूमि पूना जैसे नगर की जनता भी भाषाकी आन्दोलन के क्षणिक आवेश की शिकार बन असभ्य और असांस्कृतिक व्यवहार करने से बाज न आई।

भारत सरकारने जनवरी १९५६ को बम्बई विषयक जो निर्णय घोषित किया उसी का प्रतिपादन २७ मार्च १९५६ को बम्बई विधान सभा में तत्कालीन मुख्य मंत्री श्री. मोरारजी देसाई द्वारा प्रस्तुत राज्य पुनर्गठन विधेयक में था। उक्त विधेयक के तृतीय वाचन के समय बम्बई नगर पर महाराष्ट्र के मूलभूत अधिकार का समर्थन करते हुए अकाट्य दलीलों के साथ यशवंतरावने जो भाषण दिया वह संयुक्त महाराष्ट्र विषयक उनकी निष्ठा और भावना किसी भी अन्य महाराष्ट्रीय के बनिस्बत अधिक तीव्रतर और बुद्धिमानी से युक्त थी यह सिद्ध करने के लिए काफी था। योग्य माँग मान्य न होने के कारण जो पीडा और व्यथा महाराष्ट्रीय-मन को पहुँची थी उसका स्पष्ट प्रतिबिंब हमारे चरित्रनायक के प्रत्येक शब्द से झलक रहा था। उन्होंने अपनी वेदना, दुःख बडी ही खूबी से और चतुरता से रखा था। उन्होंने व्यथित कंठ से अपने भाषण में कहा: "बम्बई का स्थान कहाँ है, इसका प्रत्युत्तर हमें भौगोलिक परिभाषा में देना होगा। भौगोलिक दृष्टि से बम्बई महाराष्ट्र का ही अंग है! और उससे किसीने इन्कार नहीं किया है। कभी कभी इतिहास बहुत सी बातें—तथ्य—छिपा कर रखता है लेकिन भूगोल हर्गिज नहीं रखेगा।" राज्य पुनर्गठन विधेयक पर विधानसभामें चर्चा चल ही रही थी कि ३ अप्रैल को पंडित नेहरूने एक अखबारी मुलाकात में बताया कि बम्बई की समस्या स्थायी तौर पर हल होगई है—ऐसी कोई बात नहीं। बल्कि भाषाई तनाव में ओट आने पर और राज्य शांति स्थापित होने पर पुनः इस समस्या पर विचार-विनिमय किया जाएगा। तप्त वातावरण शांत करने हेतु ही कॉंग्रेस संसदीय मंडल ने बम्बई राज्यमें अधिकारिक तौर से एक भी उपचुनाव न लडने का निर्णय लिया।

राज्यपुनर्गठन विधेयक बम्बई विधानसभा में १४८ मत से पारित हुआ, २५ काँग्रेसी विधायकों ने विधेयक के विपक्षमें मतदान किया और ७२ विधायकों ने तटस्थ रह अपनी नापसंदगी प्रदर्शित की, जिसमें श्री भाऊसाहब हिरे और हमारे चरित्रनायक प्रमुख थे। यही विधेयक जब ३० जुलाई को भारतीय संसदगृह में प्रस्तुत किया गया तब श्री सी. डी. देशमुख को प्रत्युत्तर देते हुए पंडित नेहरू ने घोषित किया कि अगर आप मेरे सम्बंध में कहते हों तो बम्बई महाराष्ट्र में मिल जाने पर मुझे प्रसन्नता ही होगी। प्रत्युत जब कभी बम्बई शांत हो जायगी तब मैं स्वयं होकर ही बम्बई को महाराष्ट्र में मिलाने की वकालात करूँगा। फिर भी महाराष्ट्र काँग्रेस को समाधान न हुआ। उसमें रहे एक गुट की ऐसी मान्यता थी कि पंडित नेहरू की बम्बई केन्द्रशासित करने की योजना मान्य करने के बजाय सामूहिक रूपसे काँग्रेस तथा सरकार में रहे सभी अधिकार-स्थानों से त्यागपत्र देकर संयुक्त महाराष्ट्र की माँग स्वीकार न की—इस बात का अपनी कृति से निषेध करें। इस गुटका नेतृत्व श्री काकासाहब गाडगील, श्री भाऊ-साहब हिरे एवं श्री कुंटे कर रहे थे, जब कि पंडितजीकी योजना असमाधानजनक होते हुए भी हमें राष्ट्रहितार्थ एवं महाराष्ट्र के कल्याणार्थ मान्य कर लेना चाहिए क्योंकि वह योजना हम लोगों के प्रदीर्घ विचार-विमर्श में से ही पैदा हुई है—इस गुट का नेतृ-व हमारे चरित्रनायक जैसी युवा-शक्ति के हाथ में था। पारस्परिक मतभेदों का निवारण कर सर्व सम्मति से किसी योजना को ठोस रूप प्रदान करने का निश्चय कर १५ जून को पूना में महाराष्ट्र के सभी जिला काँग्रेस समि-तियों के अध्यक्ष तथा मंत्रियों का एक सम्मेलन आयोजित किया गया। दूसरे दिन अर्थात् १६ जून को प्रदेश काँग्रेस कार्य समिति की प्रातः ४ बजे तक सभा चलती रही। कोई बात निश्चित न हो सकी। महाराष्ट्र काँग्रेस में खुले तौर से फूट पड गई थी। दीर्घावधि की परंपरा भंग हो गई। १७ जून की महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेस की सामान्य सभामें श्री भाऊसाहब हिरे ने 'बम्बई, बेलगाँव, कारवार सह सारे मराठी भाषी प्रदेश का संयुक्त महाराष्ट्र में समावेश कराने के लिए, आम जनता को साथ ले संविधानिक पद्धति एवं प्रजातंत्रीय तरीकों का अवलम्बन कर अपनी माँग पूर्ति हेतु समस्त अधिकार स्थानों का परित्याग करना ही इष्ट है—ऐसा जिन काँग्रेस जनों को अनुभव होता है उन्हें अपने अधिकार स्थानों से त्यागपत्र देने की अनुमति यह सभा देती है।' ऐसा प्रस्ताव रखा। इस पर 'अधिकार स्थानों के परित्याग की कलम रद्द कर दी जाएँ' ऐसी उपसूचना अहमदनगर के श्री बालासाहब भारदे ने रखी जिसका समर्थन

यशवंतरावने किया। काफी चर्चा और वाद-विवाद के पश्चात् मूल प्रस्ताव ६६ विरुद्ध ५६ के मतदान से पारित हुआ। लेकिन अंत तक अधिकार-त्याग की बारी किसी पर नहीं आई। केवल फूट ही बढती गई। यशवंतराव के आत्मिक क्लेष का पारावार न रहा। जिन्हें ज्येष्ठ भ्राता समझ कर राजकीय क्षेत्र में सदा जिनके कंधे से कंधा भिडा कर कार्य किया, महाराष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति और विकास के जो सहयोगी बन कर रात-दिन कार्यरत रहे, महाराष्ट्र के बुरे और अच्छे दिनों में जो दोनों राम-लक्ष्मण की तरह साथ रहे, ऐसे राम श्री भाऊसाहब हिरे के नेतृत्व का प्रत्यक्ष विरोध करने की बारी सदा-सर्वदा एकनिष्ठ रहे लक्ष्मण यशवंतराव पर आई और महाराष्ट्र एवं भारतभू के हितार्थ उन्होंने इसे संजीदगी के साथ निभाया। फिर भी उनके मन में भाऊसाहेब हिरे के प्रति कभी दुर्भावना या अनादर की भावना निर्माण न हुई। वे आज भी श्री हिरे को उतना ही महत्व प्रदान करते हैं जितना पहले करते थे।

संसदमें राज्यपुनर्गठन विधेयक पारित होने के चार-पाँच महीने बाद सच्चे रूपमें राज्यपुनर्गठन होनेवाला था। और अब लगभग यह निश्चित था कि विदर्भ-मराठवाडा-सहित संयुक्त महाराष्ट्र, कच्छ-सौराष्ट्र-युक्त गुजरात और केन्द्रशासित बम्बई—इन तीन भागोंमें बम्बई राज्य विभाजित होनेवाला था। कुछ अवधि तक बम्बई केन्द्राधीन रह, तत्र वातावरण शांत होने पर उसका समावेश संयुक्त महाराष्ट्र में होनेवाला था। लेकिन यहाँ महाराष्ट्र असंतोषाग्नि में धूँ—धूँ जल रहा था। अगर समय रहते विरोधी दलों की योजना सफल होगई और बम्बई शांत न हुई तो यह ध्रुव-सा अटल था कि हमेशा के लिए महाराष्ट्र को बम्बई से हाथ धोने पडेंगे। यशवंतराव को यह प्रतीति भली भाँति होगई थी अतः उन्होंने बम्बई विरहित संयुक्त महाराष्ट्र के स्वागतार्थ तथा उत्तम शासन-प्रणाली का आदर्श उपस्थित कर बिगडी बाजी बनाने का मन ही मन निश्चय किया। इधर समिति अपनी वाणी तथा कृति से आतंकवादी परिस्थिति निर्माण करने में लगी हुई थी। काँग्रेसजन अपने चंचल और अनिश्चयात्मक रुख से जनता में अप्रिय हो चले थे। उनका एक शब्द भी कोई सुनने के लिए तैयार न था—फलतः वे निराश और निरुत्साही बन गये थे। अगर उन्हें इस तरह की दुविधाजनक स्थिति से बाहर निकालना हो तो किसीका सीना ठोक कर सामना करने के लिए मैदानमें आना अत्यंत आवश्यक था। तदनुसार यशवंतराव ने बम्बई विरहित मराठी राज्य की पार्श्व-

भूमि तैयार करने का श्री गणेश किसी अन्य स्थान से करने के बजाय अपनी जन्मभूमि सातारा जिले से किया। ८ जुलाई १९५६ के दिन लोकल बोर्ड के शिवाजी सभागृह में सातारा जिला काँग्रेस कार्यकर्ता एवं निमंत्रितों की सभा को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा, "सार्वजनिक रूपसे किसी विचार-धारा का प्रचार करने के पूर्व सर्व प्रथम अपने ही घर में उसका योग्य मूल्यमापन करना चाहिए। तदनुसार मैंने अपनी नीति का सारे महाराष्ट्र में प्रचार करने के पहले यहाँ व्यक्त करना यथेष्ट समझा। महाराष्ट्र के जीवन को नया मोड देने का कार्य पिछली एक दशाब्दि से हम लोग कर रहे हैं। यह जीवन किसान और मजदूरों का विकास साधनेवाला होता। इस कार्य में हमने श्री तात्यासाहब जेधे के मार्गदर्शन में कुछ प्रगति भी की। लेकिन आज बडा बांका प्रसंग आ खडा हुआ है हमारे सामने—जिसमें फँस कर सारे महाराष्ट्र का जीवन अस्ताव्यस्त हो गया है। इसमें हमारी करारी पराजय हुई है लेकिन कहते हैं न कि "Failure is the first step of success?" विफलता सफलता का प्रथम सोपान है। हमें भी पराजय से विजय की ओर प्रस्थान करना है। हमारे मार्गदर्शन के लिए लोकमान्य जैसी महान् विभूतियाँ नहीं हैं लेकिन किसी भी परिस्थिति में हमें कठिनाइयों को पार कर सफलता को वरना है। ऐसी स्थिति में भी मेरी देशनिष्ठा कायम है। मैंने अपने जीवन को देश, दल और शांतिमय उत्क्रांति की सीमाओं से बाँध रखा हैं। जब जब प्रसंग आया मैंने अन्याय के विरुद्ध सिर उठाया है। लेकिन जब माँ ही सामने खडी हों तब किससे लडा जाएँ! हाँ, माँ से लडा जा सकता है। लेकिन जब माँ कह दे कि तुम्हारा मार्ग गलत है, मैं कहूँ उसी मार्ग से जानने में ही तुम्हारी और सारे परिवार की भलाई छिपी हुई है, तब हमें माँ की आज्ञा शिरोधार्य करनी ही पडेगी। संभव है कि किसी जमाने में महाराष्ट्र ने दिल्ली-पति से दो-दो हाथ किये थे। लेकिन आज किससे किये जाय—पंडित नेहरू से जो हमारे प्रधान मंत्री हैं, या फिर पंडित पंत से जो देश की रक्षा के खड्ग प्रहरी है? कहीं कहीं से आवाज आती है कि संयुक्त महराष्ट्र के लिए हम अपने खून की अंतिम बूंद तक तैयार है। लेकिन भाइयों, मुझे खून नहीं चाहिए। अगर देना ही है तो भारत और महाराष्ट्र के नव निर्माण के लिए श्रम, संपत्ति और शक्ति दो। सहयोग दो। हमने जो माँग की थी वह दो-चार महीनों के भीतर ही पूरी होने जा रही है। अब रहा प्रश्न बम्बई का। अगर बम्बई प्राप्त करना है तो जो हमारे आंचल में डाला जा रहा है उसका उत्तम ढंग से प्रशासन कर एक आदर्श उपस्थित करें। विश्वास रखो, वह

आदर्श ही हमें बम्बई दिलाने का निमित्त बनेगा। हमारे सहयोगी कहते हैं कि बम्बई का समावेश नये राज्य में न होने के कारण काँग्रेस की शक्ति क्षीण होगई है। लेकिन मैं इस बात को मानने के लिए कतइ तैयार नहीं। संसद जो निर्णय देगी वही हमें कार्यान्वित करना है। हम अपनी तरफसे कोई दूसरा निर्णय कार्यान्वित नहीं कर सकते अथवा समिति अधिकारारूढ होजाय तो वह भी नहीं कर सकती। और फिर जनशक्ति तो उस लहर की तरह है जो क्षण में उठती है और दूसरे ही क्षण शांत हो जाती है।"

इस तरह सातारा जिला काँग्रेसजनों के बीच अपनी नयी नीति का विवेचन करने के पश्चात् यशवंतरावने २६ जुलाई से ३० जुलाई तक चार दिवसीय दौरे का कार्यक्रम बनाया और सातारा, कोरेगाँव, पुसे सावली, कराड, वाई आदि गाँवों में प्रचंड सभाओं को सम्बोधित किया। उन्होंने अपनी कोरेगाँव सभा में कहा: "महाराष्ट्र पर मेरा असीम प्रेम है, काँग्रेस के प्रति मेरे मन में अत्यधिक श्रद्धा और निष्ठा है। बम्बई को मैं महाराष्ट्र का स्पंदन समझता हूँ। इन सबसे बढकर भी राष्ट्रीय-ऐक्य मेरे जीवन का अंतिम ध्येय है—जिसके सामने सभी क्रिया-कलाप गौण हैं।" कराड की सभा में २०-२५ हजार का जनसमूह ने शांतचित्त से यशवंतराव को सुना, जिनमें विरोधी दलों के लोग तथा असंख्य कृषक-वर्ग था। उस समय हमारे चरित्रनायक की गणना महाराष्ट्र के वादग्रस्त व्यक्ति के रूप में ठौर-ठौर होती थी—लेकिन यशवंतराव अपनी नीति से जरा भी चलित न हुए। वे निर्भय वृत्ति एवं दृढ मनोबल के सहारे अपनी नीति का विवेचन करते गये। यशवंतराव के इस दौरे से प्रोत्साहित हो, अन्य काँग्रेसजन भी हाथ-पाँव हिलाने लगे। समिति के असत्य प्रचार का खंडन करने लगे। उत्तर सातारा, दक्षिण सातारा, सोलापुर और पूना जिले के काँग्रेसजन जनता को काँग्रेस की नीति का पयपान कराने हेतु दौरे करने लगे।

लोकमान्य तिलक के श्राद्धदिन १ अगस्त को पूना की सार्वजनिक सभामें पंडित नेहरू ने पुनः एक बार बम्बई की चर्चा करते हुए घोषित किया, वातावरण में शांति छा जाने पर तथा दैनंदिन कार्य की रफ्तार नियमित हो जाने पर वे खुद हो कर बम्बई को महाराष्ट्र में मिलाने की सिफारिश करेंगे। पंडितजी की बार बार की घोषणा से प्रोत्साहित हो, अखिल भारतीय कीर्ति के कुछ नेताओं में विशाल द्विभाषिक की योजना की चर्चा होने लगी। इन नेताओंमें सुप्रसिद्ध गान्धीवादी प्रजासमाजवादी नेता आचार्य कृपलानी, साथी अशोक मेहता, श्री देशमुख,

एकमेव बडे राज्य विशाल द्विभाषिक का प्रगत, उन्नत, समृद्ध एवं ऐश्वर्यशाली होना सुनिश्चित है। फिर भी समिति नेता एवं कुछ काँग्रेसियों ने अपना हठाग्रह अंत तक कायम रखा। इसी प्रश्नको ले, बम्बई के उपमद्यनिषेध मंत्री श्री नरवणे, खेर मंत्रीमंडल के श्री ल. मा. पाटील आदि ने काँग्रेस से इस्तीफा दे, वामपक्षियों से गठबंधन किया। महाराष्ट्र के सुशिक्षित समाज में यह वंदना घर बस गई थी कि लोकमान्य के अनन्तर पूज्य बापू और उनके अनुयायी अखिल भारतीय राजनीति से महाराष्ट्र को नेस्तनाबुद करनेका जान-बुझकर प्रयत्न कर रहे हैं। परिणाम यह हुआ कि समय के साथ महाराष्ट्र का बुद्धिवादी-वर्ग काँग्रेस से दूर होता गया। और बहुजन समाज निकट और निकटतर। तर्कतीर्थ श्री लक्ष्मणशास्त्री जोशी, श्री. ह. रा. महाजनी, श्री. सी. डी. देशमुख, शंकरराव देव, रावसाहब पटवर्धन और आचार्य विनोबा भावे आदि लोग अवश्य हैं। आज भी महाराष्ट्र में जो अपनी स्पष्टवादिता और दूरदर्शी विचारधारा से जनतंत्र का सही मूल्यांकन कर सकते हैं। पर बुद्धिवादी वर्ग इनसे किनाराकशी करते थे। इन लोगोंने भी राष्ट्रीय हित एवं महाराष्ट्र के हितार्थ भाषाई आन्दोलन का निषेध कर विशाल द्विभाषिक का पूर्ण समर्थन किया था। संयुक्त महाराष्ट्र के प्रश्न पर महाराष्ट्रीय नेताओं द्वारा अंगिकार की गई नीति और वृत्ति की समालोचना करते हुए तर्कतीर्थ श्री लक्ष्मणशास्त्रीने पूना की वसंत व्याख्यानमाला के व्यासपीठ से समिति की आतंकवादी नीति की जरा भी परवाह किये बिना रामशास्त्री की तरह स्पष्ट शब्दों में कहा कि, "राज्यनीति शास्त्र के दृष्टिकोण से महाराष्ट्र भरमें संयुक्त महाराष्ट्र के प्रश्न पर अगर किसी की नीति सही है तो वह केवल यशवंतराव चव्हाण ही हैं।"

१२ : द्विभाषिक का प्रयोग

भारतीय संसद द्वारा तटस्थ नीतिसे विशाल द्विभाषिक का विधेयक पारित करनेके के पश्चात् उसका स्वागत करने और आदर्श राज्यके रूपमें परिणत करने के लिए आवश्यक जन-सहयोग प्राप्त करने के हेतु हमारे

श्री ह. रा. कामथ, श्री फिरोज गांधी आदि मुख्य थे। इन्होंने परस्पर प्रदीर्घ चर्चा-विचारणा कर अपनी योजना पूना से लौटने पर पंडित नेहरू के समक्ष रखी और उनकी शुभाशिष प्राप्त की। तत्पश्चात् २८२ सर्वपक्षीय संसद सदस्यों के हस्ताक्षर इकट्ठे कर विशाल द्विभाषिक की योजना संसदगृह में सादर की। काँग्रेस संसदीय मंडल ने अपनी ६ अगस्त १९५६ की आवश्यक बैठक में उक्त योजना को मान्यता प्रदान की। १० अगस्त को विशाल द्विभाषिक को भारतीय प्रजातंत्र की सर्वोच्च सत्ता संसदगृह ने एक प्रस्ताव पारित कर मान्य किया।

हालाँकि इस योजना से यशवंतराव का पूर्ण समाधान नहीं हुआ; लेकिन राष्ट्रीय ऐक्य तथा दलनिष्ठा के प्रतीक स्वरूप उन्होंने इस निर्णय को शिरसावंद्य कर कार्यान्वित करने का निर्धार किया। तदनुसार ११ अगस्त को पूना में काँग्रेस भवनमें आयोजित कार्यकर्ता एवं निमंत्रितों की सभा में दृढ स्वरमें कहा : "कल बम्बई विषयक जो निर्णय लिया गया है उसे हमें अब अंतिम निर्णय ही मानना चाहिए और उसे कार्यान्वित करने के लिए तन मन धन से जुट जाना चाहिए।" तत्पश्चात् हमारे चरित्रनायकने पूना जिला का त्रि-दिवसीय झंझावाती दौरा किया। दौरे में उन्हें सासवड, इंदापुर, बारामती तहसीलों में प्रेम के साथ अपमान का भी सामना करना पडा। इनके प्रभावी प्रचार-तंत्र से समिति नेता घबरा उठे। अगर इनको न रोका गया तो बनी-बनाई बाजी धूल में मिल जाएगी। काफी सोच विचार कर समिति-नेताओंने जहाँ यशवंतराव का कार्यक्रम हों—अपने समानान्तर कार्यक्रम करने का निश्चय किया। यशवंतरावने फिरभी अपनी जिद्द न छोडी। वे जानते थे कि जनता काँग्रेस के पीछे हैं और काँग्रेस की नीति में ही अपना तथा महाराष्ट्र का हित सुरक्षित समझती है। लेकिन समिति का भस्मासुर उन्हें सही मार्गसे गुमराह कर विस्फोटक परिस्थिति निर्माण करने के लिए विवश करता है। यशवंतरावने प्रेम से, समझौते से, चर्चा-विचारणा से इस स्थिति पर नियंत्रण पाने में ही कल के महाराष्ट्र का हित और कल्याण समझा!

वास्तवमें देखा जाय तो विशाल द्विभाषिक का निर्णय हो जाने के पश्चात् संयुक्त महाराष्ट्र का बार-बार पुरस्कार करना एक प्रकार का पागलपन ही था। क्योंकि विशाल द्विभाषिक में बम्बई सह मराठी भाषी समस्त प्रदेश का समावेश था। गुजरातियोंके बनिस्बत महाराष्ट्रियों की जनसंख्या का अनुपात भी १:३ था। सभी प्रश्नों पर महाराष्ट्र अपनी बहुमति से इच्छित नीति अपना सकता था। साथही गुजरात की संपदा और महाराष्ट्र के श्रम का सम्मिश्रण हो भारत के

चरित्रनायक जी-तोड मेहनत कर रहे थे। उन्होंने महाराष्ट्र के विभिन्न जिलों के तूफानी दौरे कर कर बृहद् बम्बई राज्य के स्वागतार्थ सज्ज रहनेका आदेश दिया। भाषाई वातावरण से धूमिल बने महाराष्ट्र के राजकीय क्षितिज पर काँग्रेस कार्यकर्ताओं के लिए यशवंतराव एक नक्षत्र सिद्ध हुए, जिनके सहारे उन्होंने अपनी नाव खेनेमें ही श्रेय समझा। दिन-ब-दिन यशवंतराव के अनुयायियों की संख्या में वृद्धि होने लगी। सभी का एक ही निर्णय था, एक ही निश्चय था, एक ही भावना थी—विशाल द्विभाषिक को मूर्त रूप दे, आदर्श प्रशासन का उत्कट उदाहरण प्रस्तुत कर बम्बई सह संयुक्त महाराष्ट्र निर्मिति का मार्ग सुलभ बनाना। और इसके लिए यशवंतराव ही योग्य नेता थे, जो इनकी कल्पना का संयुक्त महाराष्ट्र लाने में सिद्धहस्त थे।

१६ अक्तूबर १९५६ का दिन यशवंतराव के जीवन में सुनहरा सिद्ध हुआ। विशाल द्विभाषिक की नौका कुशलतापूर्वक पार लगाने के लिए योग्य और कर्तव्यदक्ष केवट की आवश्यकता थी, जो राजनीतिक भंवरों से बचा कर मंझिल की ओर ले जाने में सफल हो सके। और ऐसा सुकानी वर्तमान मुख्य मंत्री श्री मोरारजी देसाई के अलावा दूसरा हो ही नहीं सकते थे। अतः बम्बई, महाराष्ट्र, मराठवाडा, विदर्भ, कच्छ, सौराष्ट्र, गुजरात एवं महाराष्ट्र के काँग्रेस विधायिकों की संयुक्त बैठक सर्वसम्मति से उन्हें ही काँग्रेस विधायिका-नेता के रूपमें चुननेवाली थी। लेकिन ऐन मौके पर अजीब उलझन पैदा हो गई। श्री भाऊसाहब हिरे ने पक्षनेता के चुनावमें श्री देसाई की प्रतिस्पर्धा करने की घोषणा की। इधर श्री मोरारजीने घोषित किया कि वे सर्वसम्मति से निर्वाचित होना पसंद करेंगे। श्री हिरे को विविध प्रकारसे समझाया गया लेकिन वे अंत तक अपने निश्चय से टस से मस न हुए। परिणाम यह हुआ कि श्री हिरे के प्रतिस्पर्धी के रूपमें बहुसंख्यक विधायकोंने हमारे चरित्रनायक को श्री मोरारजी देसाई के आशीर्वाद के साथ खडा किया। मतदान संपन्न हुआ और यशवंतराव ३३३ विधायकों का समर्थन पा, विधायिका काँग्रेस दल के नेता के रूप में चुने गये। और इस तरह कम उम्रमें ही भारतके सबसे बडे और प्रगत राज्य के मुख्य मंत्री बनने का सौभाग्य प्राप्त किया।

यशवंतराव का मुख्य मंत्री के रूपमें निर्वाचन होने पर उनका सार्वजनिक अभिनंदन करने का प्रथमावसर बम्बई डक मजदूर संघ को मिला। बम्बई के मजदूर-जगत में यशवंतराव के मुख्य मंत्री चुने जाने पर प्रसन्नता की लहर फैल

गई थी; किसान-वर्ग तो मानों खुद ही को रावपद मिला हो इस खुशी से पागल हो रहे थे। महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेस द्वारा २१ अक्तूबर को पूना में आयोजित समारोह का अभिनंदन स्वीकार करते हुए उन्होंने गद्‌गद् कंठ से कहा : "यह स्वागत मेरा न हो कर मैं जिस बलशाली और जनतंत्र की वाहक काँग्रेस संस्था है उसका है। अगले छह-सात महीनों में हमें विकट और उलझनमय परिस्थिति का सामना करना है। द्विभाषिक यह काँग्रेस श्रेष्ठि वर्ग और संसद द्वारा महाराष्ट्र को दिया गया चुनौती है जिसे स्वीकार कर हमें सफल कर बनाना है।" इससे यह स्पष्ट ध्वनित होता है कि अन्य काँग्रेसजनों की भाँति वे भावना के बहाव में अपना संतुलन खोनेवाले न थे बल्कि जो निर्णय लिया है उसे जीवन के अंतिम क्षणों तक निष्ठापूर्वक निभाने में ही मानव जीवन का साफल्य समझते थे। अपने पर पडी नई जिम्मेदारी को पूर्ण करने के लिए संगी-संगाथियों से अपील करते हुए उन्होंने आगे कहा कि मुझे तुम्हारे सहयोग की आवश्यकता है। जो बुजुर्ग हैं वे अपनी शुभाशिष दें, समवयस्क हैं वे सहयोग दें, और जो छोटे हैं वे शुभेच्छा प्रकट करें। आज के युग में 'विना सहकार नहीं उद्धार' वाली सूक्ति ठीक ठीक उतरती है। जनसेवा का अमोघ साधन सत्ता है और मैं उसी दृष्टिकोण से उसके प्रति देखता हूँ।

बम्बई में २८ अक्तूबर के दिन सातारा जिले के सर्वदलीय मजदूरों ने 'अपने जिले के लौहपुरुष' का बडी ही सजधज के साथ स्वागत किया, जिसे अनुभव कर यशवंतराव का कंठ अवरुद्ध हो उठा। उन्होंने प्रत्युत्तर में कहा: "मेरे कार्यालय के द्वार हर किसी के लिए चौबीस घंटे खुले हैं। मैं सामान्य किसान का पुत्र आज बम्बई जैसे भारत के प्रथम पंक्ति के राज्य का मुख्य मंत्री बन पाया हूँ अर्थात् अब वे दिन लद गये, जब मुट्ठीभर बुद्धिवादी वर्ग अपने निहित स्वार्थ के लिए बहुजन समाज पर नाजायज हुकूमत करता था। बल्कि अब सही अर्थ में समाजवादी विचारधारा प्रशासन में अपना योग्य स्थान बनाने जा रही है। मेरे पर जो उत्तरदायित्व डाला गया है वह निजी अथवा वैयक्तिक गुणानुबंध के कारण नहीं बल्कि ईस्वी सन् १९२०-३० में जो नई शक्तिशाली पीढी जन्मी उस पीढीका मैं प्रतिनिधि हूँ अतः उत्तरायित्व डाला गया है। शैक्षणिक चाह, जनजागृति, स्वस्थ राष्ट्रीयत्व का उदय, आर्थिक एवं सामाजिक न्याय की जानकारी आदि बातों का वेग से गाँवों में प्रचार और प्रसार हुआ। उसी वातावरण में से इस नई शक्ति का भी उदय हुआ। अगर यह शक्ति कार्यक्षम और सतत जाग्रत रही तो मुझे यश मिलेगा। अतः उस शक्ति का

हमें नवराज्य के निर्माण में तन-मन-धनसे लग जाना चाहिए। देश आज़ाद होने के पूर्व भी इस राज्यने अनेक उत्तमोत्तम प्रशासक राज्यीय सरकार तथा अखिल भारत को प्रदान किये थे। नया राज्य हमारे राष्ट्रपिता पूज्य बापूकी ठीक वैसे ही हिन्दकेसरी लोकमान्य तिलक की कर्मभूमि एवं पुण्यभूमि हैं। स्वामी दयानंद सरस्वती, हेमचंद्राचार्य, कवि नर्मद, समर्थ रामदास, तुकाराम इसी भूमिमें खेले, खाये और बढे हुए हैं। सर फिरोजशाह मेहता, नामदार गोखले, श्री विठ्ठलभाई पटेल जैसे राज्यधुरंधर पंडित इसी की मिट्टी और आबोहवा में पले। स्वाधीन भारत में स्व. बालासाहब खेर एवं श्री मोरारजी देसाई जैसे राजनीति के मंजे हुए खिलाडियों ने इसकी बागडोर सम्हाल, बम्बई राज्यके आदर्श प्रशासन की पताकाएँ सर्वत्र फैलाई हैं। मैं उन्हीं विभूतियों से प्रेरणा, प्रोत्साहन और शक्ति ले नये राज्य विशाल द्विभाषिक के शासन-सूत्र का कठिन उत्तर-दायित्व अपने पर ले रहा हूँ। इस आशासे कि इनका मार्गदर्शन और प्रेरणा मुझे सदा-सर्वदा आगे बढाती रहेगी।"

मुख्यमंत्रीत्वके अधिकार-सूत्र ग्रहण करने के पश्चात् यशवंतराव का भव्य स्वागत समारोह करने का प्रथम सम्मान उनकी जन्मभूमि कराड को मिला। कराड जैसी छोटी नगरीने अपने सपूत के स्वागतमें आँखें बिछा दीं। स्नेह और ममता से पुत्र को दुलराया और ऐसा रत्न अपनी कोख से जन्मा अतः स्वयं के भाग्य की सराहना की। कराड-निवासियों के आबाल-वृद्ध, राय-रंक, स्त्री-पुरुष की खुशी का तो कहना ही क्या था? उनका हृदय-मयूर आनन्द-विभोर हो झूम उठा था। १४ नवम्बर के दिन लता-पल्लवों से सुशोभित कराडने अपने सलोने बेटे का आनन्दातिरेक के वशीभूत हो आज तक की सभी परंपराओं की सीमाओं का उल्लंघन कर सत्कार किया। एस. टी. स्टेन्ड विशाल मानव मैदिनी से भर गया। सभी के चेहरे एक प्रकार कीं स्वर्गीया-नन्दकी आभा से दमक रहे थे। इस प्रसंग पर यशवंतराव के सभी सगी-संगाथी, पुराने मित्र, विरोधी शिविर के लोग तथा भूमिगत आन्दोलन के सहयोगी उपस्थित थे। सभामें लगभग १२०० पुष्पमालाएँ अर्पण की गईं और एक लाख से अधिक जनसंख्याने उसमें सम्मिलित हो अपनी खुशी प्रकट की।

भव्य स्वागत समारोह को देख कर यशवंतराव की आँखें छलछला आईं। उन्होंने गद्‌गद् कंठ से कहा: "भारतीय संसद द्वारा किये गये निर्णय से एक नये युग का प्रारम्भ हो रहा है, वह महात्मा गांधी एवं लोकमान्य तिलकजी की श्रेष्ठ सीख का अत्युत्तम प्रतीक है। मुट्ठीभर लोगों को प्रसन्न करने के लिए

संवर्धन करने के लिए तुम्हें हमेशा सजग प्रहरी की भाँति आँखों में अंजन डाले तैयार रहना चाहिए।"

नवम्बर की पहली तारीख को यशवंतराव ने अपने मंत्री मंडल का गठन किया, जिसमें विशाल द्विभाषिक के सभी हिस्सों का पूर्ण प्रतिनिधित्व था। यशवंतराव ने राज्य का मुख्यमंत्रीत्व ग्रहण कर नये राज्य की जनता के नाम संदेश भेजते हुए कहा कि, "आजका दिन परम मंगलकारी है। सभी लोग दीपावलि मनाने में मग्न हैं। दीवाली का अवसर होने के कारण नये बम्बई राज्य का निर्मिति-दिन भी मांगल्य और कल्याणकारी भावना से युक्त है। अभी अभी वर्षा ऋतु खत्म हुई है अतः धरती भी हरी चुनरिया ओढ पुलकित हो उठी है। अच्छी बारिश के कारण किसानों का मुखमंडल दीप्त है। स्वच्छ हवा, विपुल जलराशि, अच्छी फसल का समय और त्यौहार के कारण सभी के मन प्रफुल्लित हैं। ऐसे शुभावसर पर हम नये राज्य विशाल द्विभाषिक के नागरिक बन रहे हैं। हमारे लिये यह क्या कम खुशी का दिन है?

"नया राज्य पाँच करोड आबादी से युक्त १ लाख ९० हजार चौरस वर्गमील का एक विस्तृत प्रदेश है। जन-संख्या को छोड दिया जाय तो क्षेत्रफल, शिक्षण, शासन-प्रणाली, सरकारी उत्पन्न, आर्थिक विकासक्षमता, औद्योगिक प्रगति, यातायात, परिवहन-संचारशक्ति आदि की दृष्टि से समस्त भारतवर्ष में अद्वितीय है। किसी भी प्रदेश की उन्नति और समृद्धि के लिए परमावश्यक आर्थिक क्षमता के स्रोत स्वरूप कच्चा माल, नये कार्य की जिम्मेदारी के लिए यथेष्ट श्रम-शक्ति और विकसित क्षेत्र की रीढ स्वरूप योग्य निष्णात—ये सभी नये बम्बई राज्यमें उपलब्ध हैं। भारत के अनेक पुनर्गठित राज्यों में बम्बई राज्य को विशेष महत्व है। परिणामस्वरूप बम्बई का विशाल द्विभाषिक राज्य भारत के समक्ष कौनसा आदर्श उपस्थित करेगा इस ओर भारतीय जनता आस्थापूर्वक लक्ष्य दे रखी है। मराठी और गुजराती प्रजा को एक बार फिर एक-दूसरे का पूरक बन नये राज्य की नई कल्पनाओं को, महत्वाकांक्षाओं को पूर्ण करना है। यही उनकी कसौटी है। और इस कसौटी पर ही विशाल द्विभाषिक की गगनचुम्बी अट्टालिका का सारा आधार है। नये राज्यमें जात-पात, धर्म या भाषा-भेद की जरा भी परवाह किये बिना तटस्थ भावना से राज्यप्रशासनिक कर्त्तव्य पूरे किये जायेंगे। भाषा और प्रादेशिक भेद-भाव को यहाँ स्थान न होगा। जिस दिन विशाल द्विभाषिक का मंगल उदय हुआ उसी दिन सभी झगडें—वाद मिट गये हैं। अब गई सो गंगा और रहा सो तीरथ समझ कर

१ नवम्बर को नींव पडी है। इन पाँच करोड में विभिन्न परंपराएँ, विभिन्न धर्म, विभिन्न रीति-रिवाज, विभिन्न वेशभूषा, विभिन्न भाषा और विभिन्न संस्कृति का सलोना संगम है। उपर-उपर से यह सब अलग-अलग है लेकिन सभी का देश एक है, सभी का धर्म एक है, सभी की संस्कृति एक है—वह है भारत देश, हिंदु धर्म और भारतीय संस्कृति ! नागपुरनिवासियों का मैं किन शब्दोंमें आभार मानूँ—यही नहीं सुझता ? बाकइ मैं अत्यधिक कृतज्ञ हूँ नागपुर और विदर्भ का ! जिन्होंने अपने पूरे होते महाविदर्भ के स्वप्न को मराठी भाषी प्रदेश की एकता एवं अखंडता के लिए परित्याग दिया। आजसे कुछ समय पूर्व तक नागपुर एक उन्नत राज्य की राजधानी था, राजनैतिक कार्यों का केन्द्र था, लेकिन आज न रही। नागपुरनिवासियों को इसका दुःख भी है। मैं खुद भी दुःखानुभव करता हूँ। लेकिन जिस तरह जन-कल्याण और विश्वहितार्थ भगवान नीलकंठने विषपान किया था ठीक उसी तरह हमें भी राष्ट्रीय ऐक्य, प्रजातांत्रिक प्रशासन की कसौटी एवं दलनिष्ठा के लिए हँसते हँसते विषपान करना होगा। नागपुर शहर का महत्त्व कायम रखने के लिए बम्बई सरकार सदा प्रयत्नशील रहेगी। हमारे प्रधानमंत्री पंडित नेहरू ने भी यही बात बार-बार कही है। और मैं उसे दुहरा कर आपको निश्चिंत करना चाहता हूँ। अंतमें, मैं यही कहूँगा कि यह जनता का राज्य है; प्रजाराज्य है। अब यहां कोई राजा नहीं है। राजा और प्रजा दोनों हम ही हम हैं।"

महाराष्ट्र की समिति ने ही गुजरातमें महागुजरात जनता परिषद के रूपमें पुनरावतार धारण किया था। दोनों की रीति-नीति एक थी। दोनों एकभाषी राज्य की आड में अपनी देढ चावल की खिचडी अलग पकाना चाहते थे। लेकिन केन्द्रीय वरिष्ठ नेताओं के निवेदन तथा मुख्य मंत्री यशवंतराव के तूफानी दौरे से जनता शांत होती जा रही थी। वह इनके निवेदन तथा विचारों पर पुनः सोचने तक की स्थिति में आ गई थी। सत्तारूढ दलकी कुछ दलीलें इनके गले उतरने लगी थीं। उधर संयुक्त महाराष्ट्र समिति तथा महागुजरात जनता परिषद इस स्थितिका सामना करने के लिए कतई तैयार न थी। अल्पावधि में ही भारतभरमें आम चुनाव सम्पन्न होनेवाले थे। अगर इस समय जनसाधारण में असंतोष की आग न भडका दे तो देश के सर्वशक्तिशाली दल के सामने टिकना मुश्किल ही नहीं बिल्कुल असंभव था। अतः कृत्रिम विरोध की लहर उभर आई। विदर्भ का व्यस्त दौरा पूर्ण कर यशवंतरावने १५ दिसम्बर को अहमदाबाद के लिये प्रस्थान किया। इससे पहले कई बार इनका आगमन गुजरात में हुआ था।

इस निर्णय में कदापि बदल नहीं हो सकता; बल्कि उसे बदलने की सत्ता केवल भारतीय संसद को ही है। मुख्यमंत्री पद जैसे प्रादेशिक सत्ता के सर्वोच्च स्थान पर मेरी नियुक्ति का अर्थ है भारत में पुरोगामी-वृत्ति का बीजारोपण होना। जब तक बम्बई राज्य के विषय में अंतिम निर्णय नहीं हुआ था हममें से प्रत्येकने काँग्रेसदल एवं समितिने संयुक्त महाराष्ट्र की इष्ट सिद्धि प्राप्त करने हेतु विभिन्न मार्गोंका अवलम्ब किया था। प्रत्येक की राहें अलग थीं पर ध्येय एक ही था। लेकिन जब अंतिम निर्णय हो चुका है तो हमें नवनिर्माण के लिये, नये राज्य की समृद्धि और वृद्धि के लिए कंधेसे कंधा भिडा कर काम करना चाहिए। एक साथ कदम बढा कर आगे बढना चाहिए।" ठीक इसी तरह सोलापुर जिला काँग्रेस द्वारा पार्क मैदान पर आयोजित स्वागत सभा में बोलते हुए यशवंतरावने कहा : "यह पहला अवसर है कि समस्त मराठी भाषी जनता एक राज्य का अंग बन गई है; द्विभाषिक राज्य में भी उन्हें एकभाषी राज्यकी तमाम सुविधाएँ और लाभ उपलब्ध होंगे। संयुक्त महाराष्ट्र का स्वप्न अनायास ही पूर्ण होगया है। राज्यीय भाषा के रूप में मराठी का खुल कर प्रयोग किया जाएगा और बिना किसी रुकावट-बाधाके मराठी संस्कृति का दिन-ब-दिन विकास होगा।" गुजरात के कछोली ग्राम के ग्रामीणों द्वारा अपने नौजवान मुख्य मन्त्री का किये गये सम्मान का प्रत्युत्तर देते हुए उन्होंने बताया : "बम्बई नगर यह मराठी-गुजराती भाई-भाई का अनन्य प्रतीक है, जो पिछली दो सदियों से हमें शांतिमय सहअस्तित्व, सद्भावना, प्रेम और स्नेह का मूक संदेश देता है। इस संसार में प्रेम और स्नेह का विभाजन ना कभी हुआ है ना कभी होगा। यह तथ्य मान्य होनेपर ही दोनोंने सहजीवन का मार्ग अपनाया है।"

मुख्य मंत्री बन जाने पर यशवंतरावने पहला जो काम किया वह विशाल राज्य के विभिन्न स्थानों का तूफानी दौरा! सबसे पहले वे महाराष्ट्र में गये। महाराष्ट्र की जनता को विशाल द्विभाषिक ही क्यों योग्य है? उससे संयुक्त महाराष्ट्र को क्या लाभ होगा? मराठी संस्कृति का विकास कैसे होगा? आदि अटपटी समस्याओं का अपनी अकाट्य दलीलों के साथ निराकरण किया। विदर्भ के दौरे में उन्होंने वर्धा, चांदा, अकोला आदि शहरों को भेंट दी। १६ दिसम्बर को नागपुर शहर के चिटणीस पार्क को महती सभा में प्रवचन करते हुए यशवंतरावने नागपुरनिवासियों को आश्वासन और सांत्वन देने का प्रयास किया। उन्होंने अपने भाषण में कहा : "पांच करोड जनता को एक नये राज्य की अभी अभी

पर मुख्यमंत्री का दायित्व ग्रहण करने के अनन्तर पहला ही अवसर था। अहमदाबाद पुलकित हृदय से उनका स्वागत करना चाहता था। भव्य सभा का आयोजन किया गया था। पर जनता परिषद भला कैसे शांत बैठी रहती? उसने इनके विरुद्ध में निर्देशन तथा 'जनता कर्फ्यु' लगाने का निर्णय लिया। कर्फ्यु हमेशा संरक्षणाधिकारी ही संकटापन्न परिस्थिति में लगाते हैं। लेकिन यहाँ साम्यवादी प्रणाली का अनुकरण कर जनताने ही कानुन को हाथमें ले लिया था। जनता परिषद ने ऐसी तो आतंकमय परिस्थिति पैदा कर दी थी अहमदाबाद में कि जनता को विवश हो कर उससे सहयोग करना पडता था। जनता के चाहने पर भी उसे मुख्यमंत्री का सभाको नहीं जाने दिया और जिन्होंने जाने का प्रयास किया उसे डराया और धमकाया गया। पुलिस पर गोलीबार करने तक की नौबत आगई। लेकिन यशवंतरावने संतुलनवृत्ति न छोडी। परिणाम यह हुआ कि गोलीबार के बदले अश्रुगैस का ही प्रयोग किया गया। जनता कर्फ्यु के प्रसंग पर एक महती सभामें भाषण करते हुए यशवंतरावने कहा: "कोई ऐसी शक्ति नहीं, जो तुम पर अन्याय-अत्याचार करने के लिए आगे आएँ। पूज्य बापूके गुजरातके प्रति अगर अन्याय हुआ तो संसार में न्याय जैसी कोई चीज ही न रहेगी। गुजरात और महाराष्ट्र की जनता दीर्घावधि से भाई-भाई बन कर रही है। ऐसे विशाल हृदय के नागरिकों में परस्पर वैर-मत्सर और असंतोष-अविश्वास का बीजारोपण करने का प्रयत्न इस जन्ममें तो कदापि सफल न होगा। संकुचित प्रांतीय मनोवृत्ति को जडमूल से उखाड फेंकने के हेतु गुजराती जनता को मराठी जनता से सहकार करना चाहिये। जिस तरह गुजराती प्रजा महाराष्ट्रीय प्रजा को कुछ दे सकती है ठीक उसी तरह महाराष्ट्र से वह कुछ प्राप्त भी कर सकती है। राष्ट्रीय एकता और अनुशासन की सुदृढ नींव पर ही पूज्य बापूने भारत को तैयार किया—तभी वह इतनी सारी मुसीबतों, विषमताओं, उलझनों और संकटों के बावजूद भी आजादी के सर्वोच्च शिखर पर विराजमान हो सका। राष्ट्रीय स्वातंत्र्य ही नवोदित जनतंत्र की अप्रतिम कसौटी है। अतः देशहितार्थ प्रत्येक भारतीय को एकता बनाये रखना चाहिए।" अहमदाबाद के प्रक्षोभक निर्देशन, हडताल, आगजनी की वारदातें एवं जनता कर्फ्यु को लेकर सारे राज्य में हाहाकार मच गया। मुख्यमंत्री के अपमान को नये बम्बई राज्य की जनताने अपना अपमान समझा। राष्ट्रीय ध्वज को टुकडे-तुकडे करने की गन्दी मनोवृत्ति से गुजरात की उज्ज्वल परंपरा पर कलंक का टीका लगा दिया। सारे देश के गुजरातियों के मस्तक शर्म से झुक गये। अहमदाबाद के

पश्चात् पूना की महात्मा फुले सब्जी मंडी में पूना नगर निगम के अध्यक्ष श्री बाबुराव सणस की अध्यक्षता में आयोजित प्रचंड सभा में यशवंतरावने विशाल द्विभाषिक के प्रचार की अपनी जिद्द न छोडते कहा: "नूतन द्विभाषिक की निर्मिति से सामान्य जनता का आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास सधेगा। शैक्षणिक स्तर में प्रगति होगी। समाज जीवन उन्नत होगा। विशाल द्विभाषिक का निर्णय लोकसभा ने किया है—और हमें अनुशासनबद्ध सैनिक की तरह उसे मूर्तरूप देने के लिए अपने को खपा देना चाहिए।"

तत्पश्चात् जिस फलटन रियासतने एक बार यशवंतराव को गिरफ्तार कर ब्रिटिश सत्ताके हवाले किया था उसी फलटनने राजासाहब नायक निम्बालकर की अध्यक्षतामें अपने दायाद का भव्य स्वागत किया। इस प्रसंग पर सुश्री वेणुताई भी उनके साथ थी। अपने ही मैके में किये गये पतिकी कर्तव्यदक्षता एवं योग्यता के सम्मान से उनकी आँखें छलछला पड़ीं। कंठ अवरुद्ध हो उठा और क्षणार्ध में वह सदृश्य हृदय-पट पर अंकित हो उठा जब वे सख्त बीमार थी। जीने की कोई आशा न थी। पति देशकी आजादी के लिए वन-वन भटक रहा था। ब्रिटिश सरकारने उसकी गिरफ्तारी के लिए १०००० का बक्षीश रखा था। मृत्युके पूर्व पति के अंतिम दर्शन होंगे भी या नहीं यही चिंता खाये जा रही थी कि अचानक पतिदेव प्रगट हुए। प्रेम और स्नेह से मिश्रित वाणी में सांत्वना दी। जीने की इच्छा प्रबल हो उठी। और इधर पुलिसने अचानक छापा मार प्रियनाथ को गिरफ्तार कर, बन्दी बना लिया। लेकिन पतिदेव के भव्य मुखमंडल पर परेशानी की रेखा तक न थी। भय तो मानों उनसे कोसों दूर था। मीठा स्मित बिखेरते हुए पति ने विदा ली। समय पानी की तरह बहता रहा ही गया। कारावास से रिहाई! संरुदीय मंत्री, पूर्ति और जंगल मंत्री, राजस्वमंत्री, स्वायत्तशासन मंत्री और राज्य के मुख्य मंत्री सीढी पर सीढी चढते ही गये। और वर्षों पहले हथकडी पहने पतिदेव को देखनेवाली, आज जनता द्वारा किया जा रहा उनका भव्य स्वागत देख रही है। उनके दर्शनों के लिए जनता पागल बन रही है। कितनी विचित्र है यह दुनिया! कैसी पागल है यह दुनिया और उसके रहनेवाले!

मराठवाडा दौरे में सर्वप्रथम तुलजापूर में बसी महाराष्ट्र की कुलदेवी तुलजापूर भवानी माता का श्रद्धासिक्त हो दर्शन किया—नैवेद्य चढाया और आगे प्रस्थान किया। विशाल द्विभाषिक में मराठवाडा अभी सदियों तक ही सम्मिलित हुआ था। इसके पहले वह हैदराबाद के निजाम का अंग बना हुआ था।

की गई। यशवंतराव जिस कराड मतदार संघ से चुनाव लड रहे थे वहाँ उन्हें पटकने के लिए समिति वालों ने कसमें खा रखी थीं। श्री मोरारजी देसाई, खंडूभाई देसाई, कन्नमवार, स. का. पाटील, काकासाहब गाडगील, प्रांताध्यक्ष नायक-निंबालकर आदि को चुनाव रणांगण में परास्त करने के लिए समिति-परिषदने विविध योजनाएँ बनाई। चुनाव संपन्न हुए। श्री मोरारजी, स. का. पाटील, कन्नमवार और हमारे चरित्रनायक ने अपने प्रतिस्पर्धियों को बुरी तरह मात किया। काकासाहब गाडगील, पाटसकर, तुलसीदास जाधव, खंडुभाई देसाई, सुश्री इन्दुमती सेठ, बाबुभाई पटेल आदि रण खेत रहे। कच्छ, सौराष्ट्र, विदर्भ, मराठवाडा, बम्बई में काँग्रेस के उम्मिदवार बडी संख्या में चुन कर आये। केवल महाराष्ट्र-गुजरात में उन्हें मुँह की खानी पडी। लेकिन बम्बई विधान सभा में काँग्रेस-दल को निर्विवाद बहुमत प्राप्त हुआ था।

यशवंतराव का चुनाव-परिणाम घोषित होते ही विशाल द्विभाषिक के एक छोर से दूसरे छोर तक प्रसन्नता की लहर छागई। काँग्रेस दल की खुशी का पारावार न रहा। विरोधियों को सीधे संघर्ष में बुरी तरह से मात होना पडा था। देशके वरिष्ठ नेताओंने बधाई दी। चारों ओर से अभिनंदन के तार और संदेश प्राप्त हुए। अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं में प्रकाशित होते अखबारों ने अग्रलेख लिख कर उन्हें गौरवान्वित किया। उस अवसर पर विदर्भ के वयोवृद्ध नेता और बिहार प्रदेश के भूतपूर्व राज्यपाल माननीय अणेजीने उनका अभिनन्दन कर उनकी कर्तव्यपरायणता, प्रशासन-कौशल्य एवं अद्‌भुत कुटनीतिक-शक्ति की भूरि भूरि प्रशंसा करते हुए लिखा कि, कराड मतदार संघ से सीधे संघर्षमें आपका निर्वाचित होना अर्थात् संयुक्त महाराष्ट्र के मुकाबले विशाल द्विभाषिक को जनता द्वारा दिया गया प्रशस्ति-पत्र ही है। कराडके मतदार बन्धुओं का हार्दिक आभार-प्रदर्शन करते हुए यशवंतरावने कहा: "मेरा इस निर्वाचन में सफल हो जाने का अर्थ विशाल द्विभाषिक को जनता-जनार्दन द्वारा मिला आशीर्वाद ही मैं समझता। यह मेरी निजी सफलता न हो, सारे काँग्रेस दल की है। जनता स्थानीय समस्याओं के बदले राष्ट्रीय समस्याओं को अधिक महत्व प्रदान करती है यह मेरी सफलता से सिद्ध होता है।"

चुनाव संपन्न हुए। पिछली विधान सभा के अनेक परिचित चेहरे इस बार निर्वाचन के रणांगण में पराजित हुए। समिति-परिषद के भस्मासुरने अनेक रचनात्मक एवं निस्पृह कार्यकताओं के अपने विषैले प्रचार के बल पर बलि लिया था। विरोधियों की संख्या में ठीक-ठीक वृद्धि हुई। विधान सभा काँग्रेस दल के

यशवंतरावने अपने नये सहयोगी मराठी भाषी प्रदेश के प्रांगण में १९५७ के आम चुनाव का चुनावान्दोलन शुरू करते हुए जालना में प्रवचन करते हुए घोषित किया कि, "पिछले ६०-७० वर्षों से काँग्रेसदलने देश की सभी समस्याओं का उपयुक्त हल निकाला है। उसे गुलामी के नागपाश से मुक्त कराया है। सदियों से राजतन्त्र में सडती-गली जनता को प्रजातंत्र का उपहार दे, मुक्तता का अमर सन्देश दिया है और भावी में भी वह देश को सही रास्ते पर ले जाने में समर्थ सिद्ध होगी। अतः काँग्रेस को मत प्रदान कर लोकतंत्रात्मक प्रणाली का संरक्षण करना चाहिए। जनतंत्र में विरोधी दलों को भी महत्वपूर्ण स्थान हैं—पर हमारा दुर्भाग्य है कि हमारे देश में ऐसा कोई विरोधी दल है ही नहीं। हिंदुस्थान-पाकिस्तान को एक करने की अखंड घोषणाएँ करनेवाली हिन्दु महासभा महाराष्ट्र-गुजरात को भाषिक-शिबिरों में विभाजित करना चाहती है। रशिया-चीन का मार्गदर्शन ग्रहण करने का सतत उपदेश देनेवाला साम्यवादी दल पूज्य बापू के गुजरात का मार्गदर्शन नहीं चाहता। लोकतंत्र में सर्वोपरि लोकसत्ता के निर्णय को कार्यान्वित करना प्रत्येक दल का आद्य कर्तव्य होता है--पर हमारे यहाँ के प्रजा-समाजवादी दलने अपने नेताओं के आदेश को ही ताक पर रख दिया है। ऐसे दलों से जनतंत्र की रक्षा भला कैसे होगी? अतः देश की सुदृढ और सबसे बडी पार्टी काँग्रेस के पक्षमें ही मतदान कर उसे विजयी बनाइये।"

जैसे जैसे चुनाव की तिथियाँ निकट आने लगी विभिन्न दलों का प्रचार आन्दोलन भी प्रचंड रूप धारण करता गया। काँग्रेस को विभिन्न विभागों में विभिन्न गुटों से मुँह देना था। महाराष्ट्र में संयुक्त महाराष्ट्र समिति अपने जहरीले और भडकीले प्रचार से असंतोष की आग सतत प्रज्वलित रखे हुए थी। गुजरात में महागुजरात जनता परिषद का नेतृत्व ही साम्यवादी हाथों में चला गया था। महाविदर्भवादी अलग चिल्ला रहे थे। प्रचार के दिनों में काँग्रेसियों के साथ अशिष्ट व्यवहार किया गया। उनकी अर्थियाँ निकाल, सार्वजनिक रूपसे दहन विधि सम्पन्न की गई। व्यक्तिगत आक्षेपों से वातावरण दूषित बन गया था। अहमदाबाद में बम्बई राज्यीय शिक्षामंत्रिणी सुश्री इन्दुमती सेठ को कार से खींच कर बाहर निकाला गया। एक और मंत्री श्री बाबुभाई पटेल को उपर की मंजिल से फेंक दिया गया। पूना की गली और वाडों पर तख्तियाँ लगाई गई कि हमारे मत समिति को हैं काँग्रेसजन भूल कर भी यहाँ न आये। जगह-जगह काँग्रेस की प्रचार-सभाओं में पत्थरफेंक की गई। काँग्रेसी उम्मिदवारों के घर पर पिकेटिंग

नेता की चुनाव तिथि ५ अप्रेल १९५७ थी। महाराष्ट्र में काँग्रेस दल की स्थिति डाँवाडोल हो उठी थी। चुनावमें उसे बुरी तरह से पराजित होना पडा था। काँग्रेसान्तर्गत असंतुष्ट गुट इसका सारा दोष यशवंतराव के मत्थे मढ रहा था। जनता में यह भी अफवाह गर्म थी कि महाराष्ट्र में हुई काँग्रेस-दल की करुण पराजय के परिणामस्वरूप काँग्रेस श्रेष्ठि-वर्ग यशवंतराव पर सख्त नाराज है। अतः इस बार मुख्य मंत्री के पद के लिए इन्हें कोई अवसर नहीं बल्कि विदर्भ के कोई पुराने नेतादल के नेता बननेवाले हैं। इस प्रचार आन्दोलन के पीछे विरोधी दलों का हाथ था। वे सर्वसम्मति से चाहते थे कि यशवंतराव के समक्ष उनकी दाल न गलती थी। लाख प्रयास के बावजूद वे यशवंतराव को झुका न सके। हर चालमें उन्होंने यशवंतराव के मुकाबले मुँह की खाई थी। लेकिन उनकी आशा, निराशा में परिणत होगई जब उन्होंने सुना कि यशवंतराव सर्वसम्मति से विधायिका काग्रेस दल के नेता निर्वाचित हुए हैं।

दूसरे दिन बम्बई बन्दरगाह मजदूर संघ द्वारा आयोजित सत्कार-सभा में सम्मिलित होते हुए यशवंतरावने कहा : "कुछ लोग काँग्रेस के खिलाफ 'महाराष्ट्र छोडो' के नारे लगा रहे हैं। लेकिन शायद वे भूल गये हैं कि महाराष्ट्र में काँग्रेस दल की पराजय होने के उपरांत भी उसे २० लाख मत प्राप्त हुए हैं। काँग्रेस विरोधक हर समय महाराष्ट्र के हितैषी होने का दावा करते हैं। लेकिन 'छोडो महाराष्ट्र' का नारा यह प्रदर्शित करता है कि वे आस्तीक के साँप हैं। वे महाराष्ट्र में सतरहवीं सदी का वातावरण निर्माण कर यादवी मचाना चाहते हैं। लेकिन मैं सवीं बीसदी के वातावरण में नवमहाराष्ट्र का सर्वांगीण उत्कर्ष और प्रगति साधना चाहता हूँ।" अप्रेल १२ को मंत्रीमंडल गठन के पश्चात् आकाशवाणी के बम्बई केन्द्र से राज्यीय-प्रजा के नाम संदेश प्रसारित करते हुए उन्होंने कहा : "लगभग छह माह के पूर्ण विशाल द्विभाषिक के उद्घाटन प्रसंग पर मैंने बताया था कि राष्ट्रीय-ऐक्य और पारस्परिक सद्भावना को टिकाने हेतु हमने एकभाषी राज्य के बदले द्विभाषिक को स्वीकार किया। जिस जनताजनार्दन की संसद यह प्रतिनिधित्व करनेवाली सर्वोच्च संस्था है, उसका मैं निष्ठावंत और नम्र सेवक हूँ फलतः लोकसभा की अपेक्षाओं को मूर्तरूप देनेका प्रामाणिक प्रयत्न किया। इस अर्से में हमें अनेक जटिल समस्याओंका और चन्द असंतुष्टवर्ग के प्रखर विरोध को सतत मुँह देना पडा। हमने अपनी प्रतिष्ठा को द्विभाषिक की कसौटी पर लगा कर उसे जनता-जनार्दन में लोकप्रिय बनाने का अहर्निश कार्य किया। इसीके फलस्वरूप जनताने मुझे और मेरे दल को पाँच वर्ष तक पुनः लोकसेवा करनेका

अवसर प्रदान कर आम चुनावमें विजयी बनाया है। मैं उनके अनुग्रह को टाल नहीं सकता और इसीलिए हमारे पर पडी कठिन जिम्मेदारी को जीवन की अंतिम साँस तक वहन करने का दृढ निश्चय किया है। भाषाई आन्दोलन के दरमियान जिन निरपराधों को सहन करना पडा है या प्राणों से हाथ धोना पडा है उनके परिवारों के प्रति सहानुभूति रखते हुए सरकार उन्हें मदद देने का यथेष्ट प्रयत्न करेगी। कल्याणकारी राज्य-निर्मिति के हमारे उद्देश्य का अर्थ है लोकाभिमुख राज्य-प्रशासनिक नई सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि का आविष्कार! प्रदेश की सुख, शांति, समृद्धि और ऐश्वर्य के लिए पंचवर्षीय योजना को कार्यान्वित करना हम अपना कर्तव्य समझते हैं। प्रदेशकी औद्योगिक उत्क्रांति के लिए तांत्रिक-शिक्षण की सख्त आवश्यकता है। अतः औद्योगिक एवं आर्थिक विकास की योजना साकार बनाने हेतु तांत्रिक शिक्षण का योग्य प्रबन्ध किया जाएगा। औद्योगिक-विकास के साथ ही कृषि सुधार होना भी आवश्यक है। उसी मसले को हल करने के लिए हमारे प्रधानमंत्री पंडित नेहरूने 'Grow More Food' —'अधिक अन्न उपजाओ'—का नारा लगाया है। हम अपने राज्यमें कृषि संबंधित विभिन्न प्रयोग कर रहे हैं। हमारा प्रत्येक कार्य जनता-जनार्दन की भलाई और सर्वांगीण उन्नति की भावना को लेकर ही संपन्न होता है। आशा है, आप लोग अपना सक्रिय सहयोग प्रदान कर नये राज्य को भारत का एक आदर्श राज्य बनाने में सरकार के साथ कंधे से कंधा भिडा कर कार्य करेंगे।"

यशवंतराव जिस तरह विरोधी दलों को 'sportsman spirit'—खिलाडी वृत्ति—अपनाने का बार बार भारपूर्वक आग्रह करते हैं ठीक उसी तरह वे इस उक्ति को समय समय पर काँग्रेस जनों पर भी लागू करते रहते हैं। मुख्य-मंत्री बनजाने के पश्चात् २१ मई को जब बम्बई प्रदेश काँग्रेस समितिने उनका सत्कार करने का निर्णय किया; उन दिनों बम्बई नगर-निगम के चुनाव अभी हाल ही संपन्न हुए थे। जिस बम्बई नगर को लेकर देशव्यापी विवाद खडा हुआ था उसकी बहुसंख्यक जनता ने समिति को विजयी बना कर संयुक्त महाराष्ट्र के पक्षमें निर्णय दिया था। बम्बई निगममें काँग्रेस-दल अल्पसंख्या में चुना गया था। यशवंतरावने स्वागत समारोह का प्रत्युत्तर देते हुए बताया कि, भाषाई प्रश्न को लेकर नगरनिगम में काँग्रेस की जो पराजय हुई है उसे बम्बई के काँग्रेसजनों को खिलाडी-वृत्ति से मान लेनी चाहिए। काँग्रेसजन यह भूल जाय कि वे शासनारूढ काँग्रेस दलके सदस्य हैं; बल्कि वे उस दल के सदस्य हैं, जो भारत

का एक राजनीतिक दल है। काँग्रेसजनों को प्रायः वास्तविक तथ्यों को अपनाना सीखना चाहिए।

लोभसभाने तटस्थ नीतिका अवलम्बन कर विशाल द्विभाषिक की रचना की। श्री चिंतामण देशमुखने उसका पौरोहित्य किया। आचार्य कृपलानी, साथी अशोक मेहता, कामथ, राष्ट्रसंत विनोबा, रावसाहब पटवर्धन आदि नेताओंने मंगल आशीर्वाद दिये। काँग्रेस दलने विशाल द्विभाषिक को मूर्तरूप बनाने का बीडा उठाया और यशवंतरावने निष्ठापूर्वक नये राज्य को प्रगति-पथ पर ले जाने का दायित्व अंगिकार किया। लेकिन इससे उनकी मुश्किलियाँ घटने के बजाय और बढ गईं। समिति और परिषद ने अपना दुराग्रह न छोडा। यशवंतराव ज्यों ज्यों समझौता-वृत्ति अपनाने लगे त्यों त्यों विरोधियों के हौसले बढते गये। वे मनमानी करने लगे। फिर भी यशवंतरावने धीरज न छोडी। वे अनन्य श्रद्धा, शक्ति और निष्ठा से अपने कार्य में लग गये। मई महीने में बडे ही उत्साह के साथ कुडाल में द्विभाषी-सम्मेलन संपन्न हुआ।

मुख्यमंत्रीपद पर आसन्न होने के दूसरे दिनही बम्बई में मजदूर और किसानवर्ग ने बहुत बडे पैमाने पर यशवंतराव का स्वागत किया। स्वागताध्यक्षने अपने भाषणमें कहा : "यशवंतराव के इस राज्यके मुख्य मंत्री चुने जाने पर बम्बई के मजदूर वर्गने उनका सार्वजनिक अभिनन्दन करने का निश्चय किया। सातारा जिले के किसान परिवार में पैदा हुए एक लडके का इस तरह भारत के सबसे बडे प्रगत राज्यके मुख्य मंत्रीपद पर चुना जाना सामान्य जनता के लिए एक सुखद और आश्चर्यजनक घटना है। भारतीय संविधान की आधार-शिला जिन उदात्त सिद्धांत और नीति पर आधारित है उसकी प्रत्यक्ष प्रतीति यशवंतराव के चुनाव से हुई और विश्वास होगया कि स्वाधीन भारतमें जाति-पाति, धर्म-कर्म की श्रेष्ठता के बजाय मनुष्यमें रहे गुणों को महत्व दिया गया है।"

यशवंतराव नीचे से ऊपर उठे हैं। गरीबी क्या चीज है यह उन्हें अच्छी तरह मालूम है। अतः वे हमेशा किसान-मजदूरों की समस्या पर आस्थापूर्वक विचार करते हैं। जब सोलापुर की नरसिंगजी मील को ताले लग गये और हजारों मजदूर दाने-दाने के मुँहताज हो गये तब यशवंतरावने स्वयं जिम्मेदारी वहन कर उसे पुनः खुलवाया और बेकार मजदूरों को काम पर लगाया। नासिक सिक्युरिटी मजदूरों के हडताल करने पर यशवंतरावने मध्यस्थ बन, दोनों पक्षोंमें सन्माननीय समझौता कराया। राज्यीय यातायात सेवा के कर्मचारी जब कार्यकाल

का प्रश्न लेकर हडताल करने सोच रहे थे तब उस ओर अपना लक्ष्य केंद्रित कर योग्य न्याय दिलाया। एक बार अखिल भारतीय कल-कारखानदार संघ की त्रैमासिक बैठक का उद्घाटन भाषण करते हुए यशवंतरावने मजदूरवर्ग की न्याय-माँगों का समर्थन ही किया था। उन्होंने कहा: "औद्योगिक मजदूर-वर्ग के वासस्थानों की योग्य व्यवस्था किये बिना इस राज्यमें व्यापार-वाणिज्य के नये स्रोत खोजना भूल होगी। बम्बई और अहमदाबाद जैसे व्यापारिक नगरों में पहलेही व्यस्त व्यापारिक प्रतिष्ठान और कल-कारखानों के कारण स्थानाभाव है। ऐसी स्थितिमें नये सिरे से व्यापार-वाणिज्य को सुविधा देना निरा पागलपन होगा। आजकल विभिन्न कल-कारखाने अकाल ही बंद हो जाते हैं। कभी कभी तालाबन्दी की नीति का भी अवलम्ब किया जाता है। अतः ऐसे कल-कारखानों को राज्य सरकार अपने नियंत्रण में ले सकें ऐसी सुविधा प्रदान करनेवाला विधेयक हम शीघ्र ही ला रहे हैं।"

किसान का बेटा ही किसान के सुख-दुःख और मुश्किलियोंसे परिचित होता है। तभी यशवंतराव सहकारी कृषि और सहकारी खरीदी-विक्री पद्धति को लागू करने के पक्ष में हमेशा से ही रहे हैं। अखिल भारतीय काँग्रेस के गोहत्ती अधिवेशन में 'कृषि सुधार' का प्रस्ताव काँग्रेस श्रेष्ठि वर्ग के आग्रह से यशवंतरावने पेश किया था। प्रस्ताव पेश करते हुए उन्होंने अपने भाषण में कहा कि कृषिसुधारविषयक राज्यीय और केन्द्रीय सरकार के नियम सरल होने चाहिए, जिन्हें अनपढ किसान भी आसानी से समझ सके। वर्ना उनमें जो क्लिष्ट भाग होगा और जिसे किसान समझ न सकेगा धनिक वर्ग द्वारा उसका दुरुपयोग होने देर न लगेगी। ग्राम्य-समाज की सर्वांगीण उन्नति का बहुत-कुछ आधार इसी पर है।" प्रस्तुत प्रस्ताव के द्वारा काँग्रेसने कृषिसुधारविषयक तत्व शीघ्रातिशीघ्र कार्यान्वित कर स्वयंपूर्ण ग्रामोद्धार पर अवलम्बित सहकारी ग्रामीण अर्थरचना की स्थापना एवं विस्तार का आदेश दिया गया था।

अल्पबचत योजना के लाभालाभ को दृष्टिगत रख कर यशवंतरावने हमेशा अल्पबचत योजना अभियान का जोरदार पुरस्कार किया है। उनके विचार में अल्पबचत योजना धनिक वर्ग के बजाय मध्यमवर्ग तथा गरीबों के लिए अत्यंत उपयोगी और अधिक उपयुक्त है। इससे दो लाभ होते हैं। नई नई योजना-प्रयोजनाओं को कार्यरूप में परिणत करने के लिए सरकार को आवश्यक धनशक्ति मिलती है और प्रजाकी अपनी संपत्ति में वृद्धि होती है। अमुक अवधि के पश्चात् वही रकम मयब्याज के पुनः प्राप्त होती है। अष्टा गाँववासियों को

भक्ति का कार्यक्रम है। हिन्दूपदपादशाही के जनक छत्रपति शिवाजी के प्रति राष्ट्रीय नेता की मानवंदना है। यह कार्यक्रम भारत की ४० कोटि जनता की असीम श्रद्धा और भावना का मूर्तिमंत प्रतीक है। अतः ऐसे चिरस्मरणीय सांस्कृतिक प्रसंग पर छोटी-मोटी राजकीय बातों को पकड कर उसे अमांगल्कि बना, भारतीय जनता की नजर में महाराष्ट्र को गिराना उपयुक्त न होगा।" लेकिन उलटे घडे पर पानी डाल्ने पर वह कभी ठहरा है? कुत्ते की पूँछ छह महीने तक गड्ढेमें गाढने पर भी वह कहीं सीधी हुई है? ठीक उसी तरह समितिने अपना दुराग्रह अंत तक न छोडा सो न छोडा।

प्रतापगढ समारोह का आयोजन करनेवाली स्मारक-समिति शिव-शक्ति के उपासकों की बनी हुई थी अर्थात् आम जनता के प्रतिनिधियों की थी। उसमें किसी व्यक्ति विशेष अथवा दल्को श्रेष्ठता प्रदान की गई हो ऐसी बात न थी। फिर भी समितिनेताओं ने जब समारोह का पूर्णरूप से बहिष्कार कर दिया तब अपने आप ही प्रतापगढ का समारोह काँग्रेसियों का अपना बन गया। और यशवंतराव राज्यके मुख्य मंत्री होने के कारण तथा पंडितजी उद्घाटक बन कर आ रहे थे। अतः प्रस्तुत कार्यक्रम को सफल बनाने की सारी जिम्मेदारी काँग्रेस दल की हो गई। समारोह में सम्मिलित होने के लिए महाराष्ट्र के कोने कोने से अपार जनसमुदाय उमडा पड़ा था। जहाँ तक नजर जाती लोगों के सिर ही सिर दृष्टिगोचर होते थे। लगभग एक लाख से अधिक लोग उपस्थित थे इस प्रसंग पर! ३० नवम्बर की सुबह में पंडित नेहरू के खिलाफ निर्देशकोंने काली झंडियाँ लेकर प्रचंड निर्देशन किये। वाई से प्रतापगढ तक पुलिस का सख्त बंदोबस्त था। पास के बिना किसीको आगे नहीं बढने देते थे।

दोपहरमें शांतिदूत पंडित नेहरूने अपूर्व उत्साह के वातावरणमें, शिवाजी महाराज, पंडित नेहरू और यशवंतराव के गगनभेदी जयकारों के बीच सृष्टिसौन्दर्य के अनन्य प्रतीक प्रतापगढ दुर्ग में छत्रपति शिवाजी महाराज की लगभग ३८ फीट ऊंची अश्वारोही प्रतिमा का अनावरण किया। तत्पश्चात् शिवाजी महाराज की महानता, वीरता और अतुल्य दूरदर्शिता का गुणानुवाद करते हुए पंडितजीने कहा: "छत्रपति शिवाजी महाराज स्वयं एक महान् विभूति होकर राष्ट्रीय स्वातंत्र्य के प्रतीक हैं। वे केवल महाराष्ट्र के ही नहीं बल्कि समस्त भारत के सपूत हैं। उनके सामने जो प्रश्न और समस्याएँ थीं, वे विषम थीं। लेकिन अंत तक पदच्युत और नीतिच्युत हुए बिना

अल्पबचत योजनान्तर्गत १,३६,४३० की राशि देने पर, उनको बधाई देते हुए मुख्य मंत्रीने कहा था : "हम अच्छे और समझदार व्यक्ति को 'लाख रुपये का आदमी' कह कर सम्मानित करते हैं, लेकिन तुम लोगोंने अल्पबचत योजना में लाख रुपये से भी अधिक रकम प्रदान की है। अतः तुम्हें 'सव्वा लाखी' के बिरुद से सम्मानित करना चाहिए।"

महाराष्ट्र के इतिहास-प्रसिद्ध प्रतापगढ दुर्ग में युगपुरुष छत्रपति शिवाजी महाराज की अश्वारोही प्रतिमा का अनावरण-प्रसंग यशवंतरावके जीवन पृष्ठों में सुवर्णाक्षरोंसे अंकित किया जाएगा। ऐसे चिरस्मरणीय स्मारक की मूल कल्पना बम्बई के भूतपूर्व राज्यपाल और उत्कल के मुख्यमंत्री डॉक्टर हरेकृष्ण मेहताब जब पहली बार प्रतापगढ गये थे तब, की थी। उन्होंने अपनी कार्यावधि में शिवाजी महाराज की जयंति की सार्वजनिक छुट्टी घोषित करवाई। उस समय भाषाई आन्दोलन का कहीं नामोनिशान न था। स्मारक के लिए योग्य स्थान और समय निर्धारित करने का कार्य सातारा की रानीसाहिबा की अध्यक्षतामें गठित शिवस्मारक समिति के जिम्मे सिपूर्द किया गया। यशवंतराव भी उक्त समिति के एक सदस्य थे। समितिने ऐतिहासिक दुर्ग प्रतापगढ में शिवाजी महाराज की अश्वारोही प्रतिमा की अनावरण विधि आधुनिक युगपुरुष पंडित जवाहरलाल नेहरू के शुभ हाथों सम्पन्न कराने का सर्वसम्मति से निर्णय लिया। यह कार्य सन् १९५६ में ही सम्पन्न होनेवाला था। लेकिन पंडितजी, अधिकाधिक कार्य-व्यस्तता के कारण मन से लाख चाहने पर भी समय न निकाल सके। अतः विलम्ब हो गया। और यह प्रसंग जब आया तब राज्यपुनर्गठन आयोग के प्रतिवेदन के कारण सारा महाराष्ट्र काँग्रेस के खिलाफ था। ऐसी विषम परिस्थिति में ३० नवम्बर १९५७ के दिन प्रतापगढ में शिवाजी की प्रतिमा अनावरण करने पंडित नेहरू महाराष्ट्र में आ रहे थे।

समितिने उपरोक्त प्रसंग को कालिमा लगाने के विचार से पंडित नेहरू के खिलाफ प्रचंड प्रदर्शन और निर्देशन करने का निश्चय किया। समितिनेता एक बार फिर गरल ओकने लगे। महाराष्ट्र के कोने कोने से संयुक्त महाराष्ट्रवादी पडित नेहरू के विरुद्ध निर्देशन करने प्रतापगढ आनेवाले थे। समिति के इस निर्णय को रोकने के अनेक प्रयत्न हुए। खुद यशवंतरावने १० अक्तूबर १९५७ को बम्बईमें समितिनेताओं से अपील कर अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने का आग्रह करते हुए कहा : "प्रतापगढ का कार्यक्रम, यह आधुनिक युग पुरुष द्वारा ऐतिहासिक युग-पुरुष के प्रति सार्वजनिक रूपसे अर्पित श्रद्धा और

उन्होंने उनका बडी ही वीरता से सामना किया। आज की समस्याएँ अलग हैं, प्रश्न अलग हैं, परिस्थिति अलग है। लेकिन हम उनसे प्रेरणा लेकर आगे बढें। सफलता हमारे चरण छुएगी।" तालियों की गडगडाहट से आस्मान गूंज उठा। शिवाजी महाराज और पंडित नेहरू के जयनादों से जमीन का कप्पा कप्पा काँप उठा। कभी किसी काल में छत्रपति शिवाजी के नेतृत्व में देश की आजादी और एकता के लिये सिर हथेली पर लेकर लढनेवाले मर्द मराठोंके जयघोषों के दीर्घावधि बाद ऐसे ही जयघोष सुनकर निःसंदेह वृद्ध प्रतापगढ का रोम रोम पुलकित हो उठा होगा!

१३ : सर्वमान्य राजनेता

विशाल द्विभाषिक की नौका समिति-परिषद के भयंकर तूफान और आँधीसे बचा कर सुरक्षित हालतमें किनारे लगाने में यशवंतरावने अपना खून और पसीना एक कर दिया। नये राज्य की निर्मितिके समय जो जो संकट आये, विपत्तियाँ टूट पडीं, मतभेदों की खाई बढती गई और पग पग पर व्यक्तिगत बदनामी की बौछारें सहनी पडीं उस समय उफ् तक न किया बल्कि धैर्य से, शांतिसे और दृढता से उसका सामना अंत तक पत्थर की तरह अपनी नीति, सिद्धांत और निष्ठा पर कायम बने रहे। समुद्र-मंथन के समय जो वस्तुएँ निकलीं उनका सही बँटवारा करते समय 'विष-घट' की बारी आई। उसे लेने के लिए कोई तैयार न था। न देवता चाहते थे न दानव! इसी बात पर दोनों दल अड गये। क्षणार्धमें शांत वातावरणमें अशांतिकी लहर फैल गई। देव दानव मर मिटने के लिए तैयार हो गये। कैलासपति शिव शंभु से देव-दानवों का यों क्षुल्लक क्षुल्लक बातों पर लडना-झगडना देखा न गया। उन्होंने प्रकट हों, विषघट होठों से लगा दिया और एक ही घूँट में पी गये। वे सर्वशक्तिधारी होने के कारण विष जैसा विष हँसते हँसते पचा गये पर कंठ नीला अवश्य पड गया। तभी से मृत्युंजय और भगवान नीलकंठ कहलाये। निखिल सृष्टिके 'शिवम् सत्यम् सुंदरम्' के प्रतीक! उसी तरह भाषाई-आन्दोलन से निकले साम्प्रदायिक

वृत्ति, और भावना, विक्षिप्तता रूपी विषघट को यशवंतराव होठों से लगाकर एक ही साँस में गट कर गये।

उन्होंने अपने साथियों के सहयोग से अल्पकालमें ही प्रशासन की दृष्टि से नये बम्बई राज्यको सारे भारत का प्रथम पंक्ति का राज्य सिद्ध कर दिखाया। सुयोग्य नेतृत्व, व्यवहार्य बुद्धि, मृदु स्वभाव और सामंजस्य वृत्ति से बम्बई राज्यको प्रत्येक क्षेत्रमें उन्नति और प्रगति के पथ पर आगे बढाया। राज्य सरकारकी नई नई योजनाओं के अन्तर्गत सहस्रों लोगों को आमदनी का जरिया दिलाया। नये नये उद्योगोंका श्रीगणेश हुआ। शैक्षणिक और सांस्कृतिक क्षेत्रमें नया ज्वार आया। प्रजा की राजनैतिक, सामाजिक, बौद्धिक और नैतिक गतिविधियों को बल मिला। और काँग्रेस श्रेष्ठि वर्ग तथा संसद गृह के माननीय सदस्यों के आदेश स्वरूप प्राप्त विशाल द्विभाषिक का प्रयोग सर्व दृष्टि से सफल सिद्ध हुआ। यशवंतराव के नेतृत्व और संगठन-चातुर्य से मराठी और गुजराती भाषी पूर्णतया संतुष्ट रहे। नये राज्य की नींव गुजराती-मराठी जनता के हृदयमें घर करती जा रही थी। लेकिन भावनात्मक ऐक्य की कल्पना और पारस्परिक भ्रातृत्व प्रेम की आकांक्षा सफल न हो सकी। संयुक्त महाराष्ट्र समिति और महागुजरात जनता परिषद अपनी छिछोरी हरकतों से बाज न आ रही थी। वह रह रह कर कुछ ऐसी वारदातें करतीं कि जनता की भावना प्रक्षुब्ध हो उठती। सरकार विरोधी जहरीला प्रचार और अघटित कृति शुरू ही थी। इन सबमें योग्य मार्ग निकालना जरूरी था; वर्ना केरलकी तरह महाराष्ट्र में भी साम्यवादी जाल फैलाने का पूरा डर था। समय रहते न सम्हलें तो परिस्थिति काबू से बाहर हो जाते देर न लगेगी। अतः पर्दे के पीछे उच्चस्तरीय विचार-विनिमय कभी का शुरू हो गया था।

काफी सोच-विचार के पश्चात् सन् १९५९ के मध्यमें सर्व प्रथम केन्द्रीय गृहमंत्री पंडित गोविंद वल्लभ पंतने एक स्थान पर कहा कि अब वह समय आगया है जब विशाल द्विभाषिक के बारेमें सामंजस्यपूर्ण वातावरण में पारस्परिक सद्भावना के साथ साधक-बाधक चर्चा कर अंतिम और ठोस निर्णय कर लिया जाय। गृहमंत्री पंत के कथन की अस्पष्ट पुष्टि पंडित नेहरूने अपने बम्बई तथा पूना के सार्वजनिक भाषणों में की। नई दिल्ली में काँग्रेस कार्य-समिति की बैठक में इस प्रश्न को लेकर काफी विचार-विमर्श हुआ और यह प्रश्न तत्कालीन कांग्रेसाध्यक्षा सुश्री इंदिरा गांधी के सिपूर्द कर दिया गया! काँग्रेसाध्यक्षा को गुजरात-महाराष्ट्र का प्राथमिक दौरा कर बंगलूर अधिवेशन में विवरण पेश

यशवंतराव आज एक नौजवान भारतीय नेता के रूपमें देशकी प्रजाके समक्ष हैं। उनके आज तक के जीवन का इतिहास, भारतीय राजकीय क्षितिज पर उदित हुए नक्षत्र के पहले का इतिहास है। वास्तव में उनका राजनैतिक जीवन अब शुरू होता है। सूर्योदय होने पर तिमिराच्छन्न रात्रि का भय दूर हो जाता है और मानव मात्र को प्रकाश के साथ 'प्रवृत्तिलक्षणो योगः' का संदेश मिलता है। ठीक उसी तरह यशवंतराव ने सूर्य-रूप धारण कर भाषाई-तिमिराच्छन्न रात्रि को दूर भगा कर नवजीवन एवं राष्ट्रीय ऐक्य का अमर संदेश दिया है, जो समाज, देश, संस्कृति और धर्म का संरक्षण, संवर्धन और संगठन का मूलभूत स्वरूप है।

करना था। बंगलूर अधिवेशन में सुश्री गांधी की अध्यक्षता में एक नौ-सदस्यीय काँग्रेस उच्च समिति गठित की गई, जो विभाजन सम्बंधित प्राथमिक बातें तय करनेवाली थी। इतना सब होना था कि गुजरात-महाराष्ट्र में विभाजन की वार्ता तेजी-से फैल गई। लोगों को लगा कि उनका दुःसाध्य सपना साकार हो रहा है। भाषिकप्रश्न पर काँग्रेस की कटु टीका करनेवाले अखबारोंने बड़े बड़े शीर्षक देकर अग्रलेख लिख कर विभाजन-वार्ता का बडे ही उत्साह से स्वागत किया। काँग्रेस से अलग हुए असंख्य कार्यकर्ता पुनः अपने मातृ-दल में सम्मिलित होने लगे। डॉ. नरवणे के नेतृत्व में काँग्रेस से विलग हुई काँग्रेसजनपरिषद पुनः काँग्रेस में मिल गई। विरोधियों की सभी चालें बेकार हो गईं। वे चौंक पडे।

इसी अर्से में महाराष्ट्र काँग्रेस के ज्येष्ठ नेता और गोवा आन्दोलन के संस्थापक श्री केशवराव जेधे की मृत्यु हो जानेके कारण संसद के लिए रिक्त बने स्थान के उपचुनाव का अवसर आया। काँग्रेसने इस स्थान के लिए श्री जेधे के सुपुत्र को ही अपना उम्मिदवार मनोनीत कर चुनाव लडने का निर्णय किया। सबको आशा थी कि काँग्रेस उम्मिदवार के विरोध में कोई खडा न होगा। क्योंकि भाषाई समस्या हल जो हो गई थी। लेकिन समिति ने अपना दुराग्रह न छोडा और जेधे के खिलाफ श्री पवार, बारामती के एडवोकेट को खडा कर चुनाव लडने का निश्चय किया। संयुक्त महाराष्ट्र के उदय की मांगलिक बेला में बारामती का उपचुनाव काँग्रेस और समिति की प्रतिष्ठा का विषय बन गया। अब देखना यह था कि जनता किसके पीछे हैं—काँग्रेस या समिति? गत आम चुनाव के बाद यशवंतरावने बारामती में प्रथम बार चुनाव अभियान में सक्रिय भाग लिया। रात-दिन एक कर उन्होंने बारामती निर्वाचन क्षेत्र का तूफानी दौरा किया और प्रस्तावित महाराष्ट्र के बारे में काँग्रेस-दल की हलचलों से सबको परिचित किया। इस उपचुनाव में विजयश्री काँग्रेस के हाथ रही।

बारामती उपचुनाव से स्पष्ट हो गया कि महाराष्ट्र जनता काँग्रेस के साथ है। वह यह मानती है कि विशाल द्विभाषिक का विभाजन दो एक भाषी राज्यों में करा कर महाराष्ट्र और गुजरात राज्य की स्थापना कराने का कठिन कार्य संपन्न करनेका सारा श्रेय कर्तव्यनिष्ठ, व्यवहारकुशल, उत्तम राजनीतिज्ञ एवं युवा-शक्ति के एकमेव प्रतीक हमारे मुख्य मंत्री श्री यशवंतराव चव्हाण को है। और इसीके फलस्वरूप उनकी ४७ वीं वर्षगाँठ सांगली में महाराष्ट्र के सभी क्षेत्रों के अग्रणी और दिग्गज नेताओं तथा अथाह जनसागर के बीच बडी ही धूमधाम से मनाई गई।

परिशिष्ट

H
923.254
CHA/PAR
Copy 2

१२ मार्च १९१४ : सातारा जिलेमें देवराष्ट्र गाँव में जन्म
१९१७ : पिताजी का देहावसान
करांड की तिलक माध्यमिक शाला में शिक्षा
कुश्ती का शौक
१९३० : छात्र-आन्दोलन का नेतृत्व
: रानडे वक्तृत्व प्रतियोगिता में महाराष्ट्र भर में सर्वप्रथम
१९३२ : सत्याग्रह में भाग; १६ वर्ष की अल्पायु में १८ माह का कारावास–दण्ड
१९३४ : मैट्रिक परीक्षा में उत्तीर्ण
१९३९ : रायपंथ से सम्बंध-विच्छेद
१९३९ : राजाराम कॉलेज–कोल्हापुर से बी. ए.
१९४१ : पूना में एलएल. बी., कराडमें वकालात
१९४२ : सुश्री वेणुताई के साथ विवाह
१९४२ से ४३ : भूमिगत रह कर राष्ट्रीय आन्दोलन का संचालन
१९४४ : फलटन में गिरफ्तार
१९४५ : जेलसे रिहाई
१९४६ : बम्बई विधानसभा के सदस्य; संसदीय मंत्री
१९४८ : सातारा से 'प्रकाश' का प्रकाशन
१९४९ से १९५० : महाराष्ट्र प्रदेश कॉंग्रेस के मंत्री
१९५२ : पूर्ति मंत्रालय के मंत्री बाद स्वायत्त शासन विभाग के मंत्री; श्री. मोरारजी देसाई के मंत्रीमंडल में
१९५६ : बम्बई राज्यके मुख्यमंत्री
१९५७ : विशाल द्विभाषिक के पुनः मुख्यमंत्री
१९५८ : प्रतापगड पर शिव-प्रतिमा अनावरण समारोह
अ. भा. कॉंग्रेस के कोषाध्यक्ष
१९५९ : खडकाला की सीमा पर राष्ट्रसंत पूज्य विनोबा का स्वागत और ५००० का संपत्ति-दान
२३ दिसंबर १९५९ : अलीगड विद्यापीठ द्वारा 'डॉक्टर ऑफ लॉज्' की पदवी एनायत
१ मई १९६० : संयुक्त महाराष्ट्र के प्रथम मुख्यमंत्री

298